समकालीन साहित्य, संस्कृति, कला और विचार का मासिक

उत्तर प्रदेश

अक्टूबर–दिसम्बर, 2022, वर्ष 48

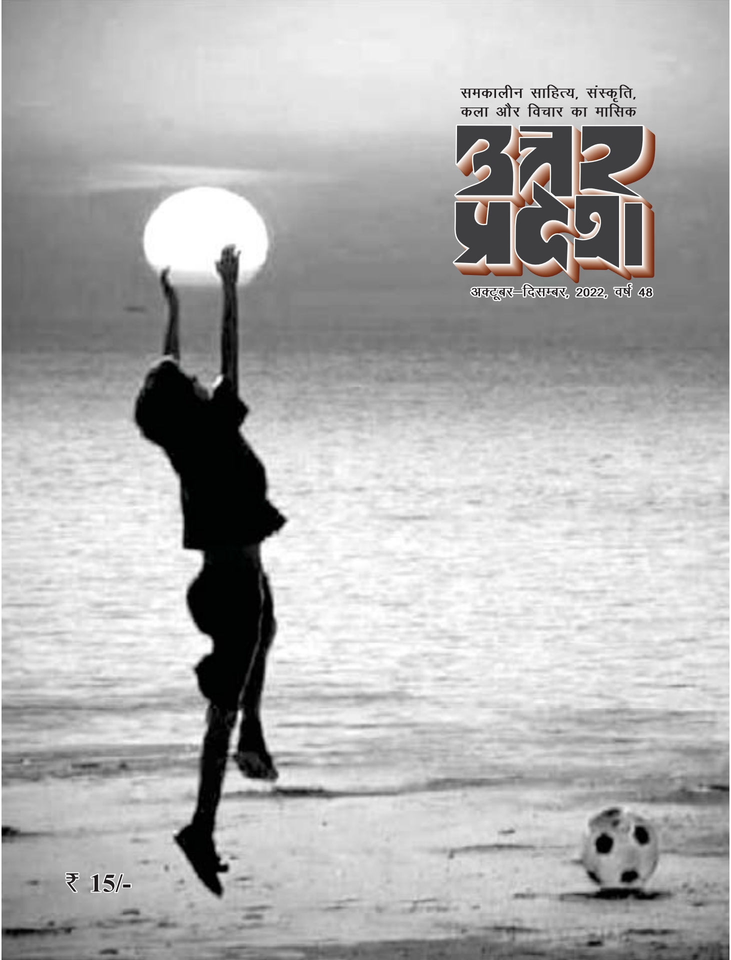

₹ 15/-

मधुर अष्ठाना की दो कविताएँ

सूर्य जब सोने चला

सूर्य जब सोने चला तो दीप ने
देहरी संभाली
फिर नये आलोक की आकाश को
दे दी प्रणाली
मृत्तिका ने मान पाया वर्तिका ने ज्योति पाई
नेह अभिसिंचत
हृदय ने रोशनी की प्रीति पाई
फिर अमावस के
गले की घण्टियां
लौ ने बजा ली
हो गये हतप्रभ
सितारी सान्ध्य–बेला जगमगाई
द्वारा पर निशि के धरा ने एक रंगोली सजाई
सर्जना के गेह से
भयभीत तम ने
फिर विदा ली
फुलझड़ी में दामिनी
उल्लास की
गंगा बहाती
खिलखिलाती रश्मियों में
बताशों की
नेह पाती
इन्द्रधनुषी पटाखों के
घोष में आई दिवाली

मदहोश मन

चन्दन–बदन सरगम हुआ
मधुमय स्वयं संयम हुआ
मदहोश मन का
क्या करूँ
बजने लगी है घंटियां
संतूर के
सुर छल गये
उद्दीप्त
रसमय रूप में झरने हमें नहला गये
दृग से जुड़े सम्बन्ध जो
अधरो पगे अनुगन्ध जो
परितोष धन का
क्या करूँ
भीतर प्रणय का
राग है
बाहर अनय की आग है
है सेज पर कलियां सजीं
उन्मत्त जिस पर नाम है
रतिमय–सुरति के ध्यान रत सोमघट संधान में
रूपोश क्षण का क्या करूँ
सोयी न पल भर यामिनी
गिरती हृदय पर
दामिनी
काली घटा बरसी बहुत
जीवन्त होती
रागिनी
अभिशप्त होते गये दिन हैं गुलाबों के शेष
ऋण, निर्दोष तन का क्या करूँ।

◆

पता : एस.एस.–108–109,
से.–ई, एलडीए कॉलोनी,
कानपुर रोड, लखनऊ–116012
मो. : 7355594937

अनुक्रम

उत्तर प्रदेश

❑ वर्ष 48 ❑ अंक 44–46
❑ अक्टूबर–दिसम्बर, 2022

यात्रा वृत्तान्त

- भारतीय संस्कृति में रचा बसा एक देश मॉरीशस ❑ प्रीति कबीर / 3

कहानी

- काश ❑ उषा सक्सेना / 6
- कुछ दिन और रुक जाते ❑ सियाराम पांडेय 'शांत' / 10
- घर ❑ शशि श्रीवास्तव / 13
- पलकों के पीछे ❑ मीनाधर पाठक / 17
- ड्राइव टाइम कॉल ❑ विनीता अस्थाना / 23

कविताएँ

- मधुर अष्ठाना की दो कविताएँ / आवरण–1
- संजय कुमार सिंह की दो कविताएँ / आवरण–2
- रविशंकर पाण्डेय की तीन कविताएँ / 27

पुस्तक समीक्षा

- रेत समाधि के बहाने ❑ अनुजा / 29

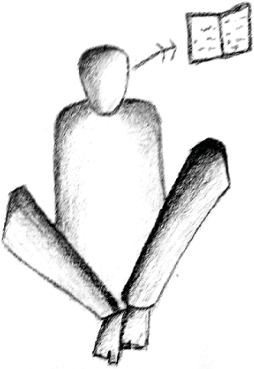

संरक्षक एवं मार्गदर्शक : ❑ **संजय प्रसाद**
प्रमुख सचिव, सूचना

प्रकाशक एवं स्वत्वाधिकारी : ❑ **शिशिर**
सूचना निदेशक, उत्तर प्रदेश

सम्पादकीय परामर्श : ❑ **अंशुमान राम त्रिपाठी**
अपर निदेशक, सूचना

सम्पादक : ❑ **कुमकुम शर्मा**
उप निदेशक, सूचना

सहयोग : ❑ **दिनेश कुमार गुप्ता**
उपसम्पादक, सूचना

आवरण : **अवधेश मिश्र**
भीतरी रेखांकन : **रीतिका**

सम्पादकीय संपर्क : सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, पं. दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
मो. : 9565449505, 8960000962
ईमेल : upmasik@gmail.com

दूरभाष : कार्यालय : ई.पी.ए.बी.एक्स 0522–2239132–33, 2236198, 2239011

पत्रिका information.up.nic.in **वेबसाइट पर उपलब्ध है।**

❑ **एक प्रति का मूल्य** : पंद्रह रुपये ❑ **वार्षिक सदस्यता** : एक सौ अस्सी रुपये
❑ **द्विवार्षिक सदस्यता** : तीन सौ साठ रूपये ❑ **त्रैवार्षिक सदस्यता** : पांच सौ चालीस रुपये

प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। इनसे मासिक पत्रिका 'उत्तर प्रदेश' और सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

—सम्पादक

आवर्तन

ये माना ज़िन्दगी है चार दिन की
बहुत होते हैं यारों चार दिन भी

– फिराक़ गोरखपुरी

फिराक़ गोखरपुरी की ये दो पंक्तियां पूरा भारतीय दर्शन समेटे हैं अपने में। एक पल हम जीवन संघर्ष से हताश होते हैं तो दूसरे ही क्षण हमें लगता है यह समझ में आता है कि करने को बहुत कुछ है जीवन में, बस मन में उत्साह चाहिये। और यही उत्साह और उमंग ही जीवन का असली राग है जो हमसे–आपसे बड़े–बड़े काम करवाता है। राग की ऋतु वसन्त हमें यह जीवन–पाठ प्रतिवर्ष पढ़ाती है। हरी–हरी पतियों से सघन हुये पेड़ पौधे, फूलों से सजे बाग बगीचे, अचानक चल पड़ी वसन्ती हवाओं से खनखनाती आवाज़ों के साथ गिरने लगते हैं, समझ में नहीं आता यह प्रेम का, राग का मौसम इतना विराग क्यों दे जाता है। शायद यही नैसर्गिक नियम है। प्रकृति में जन्म और मृत्यु, साथ–साथ चलते हैं कहीं प्राकृतिक आपदाओं से जीवन खतरे में है तो कहीं एक शिशु जन्म ले रहा है। अतः जीवन में आस्था बनी रहनी चाहिये।

पिछले दिनों चार अक्टूबर, 2022 को सुप्रसिद्ध साहित्यकार कथाकार शेखर जोशी का जाना हम सबको दुःखी कर गया। उत्तर प्रदेश परिवार की तरफ से उन्हें विनम्र श्रृद्धांजलि। साहित्य जगत में उनकी कमी कभी पूरी नहीं की जा सकेगी। शेखर जोशी कथा लेखन को दायित्वपूर्ण कर्म मानने वाले सुपरिचित कथाकारों में से थे। उनकी अनेक कहानियों को अंग्रेजी, चेक, पोलिश, रुसी, और जापानी भाषाओं में अनुवाद किया गया। उनकी प्रसिद्ध कहानी 'दाज्यु' पर बाल फिल्म सोसायटी द्वारा एक फिल्म का निर्माण भी किया गया। शेखर जोशी की अनेक कहानियों जैसे–'दाज्यु', 'कोशी का घटवार', 'बेदबू', 'मेंटल' आदि ने न सिर्फ उनके प्रशंसकों की संख्या में वृद्धि की बल्कि नई कहानी की पहचान को भी अपने तरीके से स्थापित किया है। पहाड़ी क्षेत्र की गरीबी, कठिन जीवन संघर्ष, उत्पीड़न यातना, प्रतिरोध, उम्मीद और नाउम्मीदी से भरे औद्योगिक मजदूरों के संघर्ष को बड़ी संजीदगी के साथ रेखांकित किया है। शहरों और कस्बाई निम्नवर्ग के सामाजिक नैतिक संकट, धर्म और जाति से जुड़ी रूढ़ियां उनकी कहानियों के मुख्य विषय रहे हैं। उनकी प्रमुख प्रकाशित रचनाओं में–'कोशी का घटवार' (1958), 'साथ के लोक' (1978), 'हलवाड़' (1981), 'नौरंगी बीमारी है' (1990), 'मेरा पहाड़', (1989), 'डागरी वाला' (1994), 'बच्चे का सपना' (2004), 'आदमी का डर' (2011), 'एक पेड़ की याद' (2015) और 'प्रतिनिधि कहानियां' प्रमुख हैं।

शेखर जोशी के विस्तृत लेखन और उनके जीवन के समग्र साहित्यिक अवदान के लिए उन्हें इस वर्ष का अमर उजाला का सर्वोच्च शब्द सम्मान 'आकाशदीप' हिन्दी के लिए दिया गया। पुरस्कार की घोषणा उनके जीवनकाल में ही हो गई थी परन्तु पुरस्कार ग्रहण करने के समय वे नहीं थे यह पुरस्कार उनके सुपुत्र प्रतुल जोशी ने प्राप्त किया था। हिन्दीतर भाषाओं में उड़िया की विख्यात कथाकार प्रतिभा राय को यह पुरस्कार दिया गया। उन्हें भी बधाई।

हमारी कोशिश है कि हम उत्तर प्रदेश को निरन्तर अपने पाठकों तक पहुंचाते रहे। हमारे अंक आप तक पहुंच रहे होंगे आपको कैसे लग रहे हैं। हमें बताते रहियेगा। आपकी प्रतिक्रियायें ही हमारा प्रोत्साहन हैं।

कुमकुम शर्मा

भारतीय संस्कृति में रचा बसा एक देश मॉरीशस

❑ प्रीति कबीर

मनुष्य के जीवन में पर्यटन का विशेष महत्व है। पर्यटन अर्थात् देश–विदेश में भ्रमण कर अपने ज्ञान में वर्धन करना है तो वहीं अपने तन और मन को कुछ फुर्सत के पल देकर अपनी जीवन शैली में तनाव, अशान्ति, भाग–दौड़ से कुछ समय के लिए छुटकारा पाना भी है। साफ़, प्राकृतिक सौन्दर्य में स्वयं को रमा कर जिस अद्‌भुत प्रसन्नता और नवीनता का अनुभव होता है। वह विलक्षण है।

हमारा सोचने का दायरा बढ़ता है और नई अनुभूतियों का अनुभव भी होता है। इस तरह पर्यटन हमें विवेक शील बनाता है। हमारे संपूर्ण व्यक्तित्व में बदलाव के साथ अनुभव और प्रज्ञा को मजबूत बनाता है।

पर्यटन मुझे व्यक्तिगत स्तर पर बेहद प्रसन्नता देता है। विश्व के कई देशों का भ्रमण करने का सुअवसर मुझे भी मिला।

अभी हाल ही में मुझे विश्व के एक छोटे से देश में भ्रमण का मौका मिला। जिसे आपके साथ साझा करने का मन हुआ। प्रकृति की अद्‌भुत छटा, समुद्र की नीली आभा है और पर्यटन की दृष्टि से बेहद महत्वपूर्ण और शान्तिमय एक द्वीप है।

आइए हम साथ–साथ चल कर ''मॉरीशस'' की कुछ महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त करते हैं।

मॉरीशस की यात्रा के लिए हमें भारत की राजधानी दिल्ली जाना होगा। जहाँ इन्दिरा गाँधी अर्न्तराष्ट्रीय हवाई अड्‌डे से एयर मॉरीशस एयर इंडिया का हवाई जहाज हमें साढ़े सात घन्टे की यात्रा के बाद मारीशस पहुँचाएगा। हवाई अड्‌डे श्री राम गुलाम पहुँचने पर हमें वहाँ टैक्सी सेवा उपलब्ध है।

''पार्ट लुई'' हम टैक्सी की 45 से 50 मिनट की यात्रा के बाद पहुँचते हैं।

टैक्सी में बैठते ही आपको प्रकृति की सुन्दरता के दर्शन होते है। प्रदूषण रहित नीला आकाश, सड़कें मक्खन सी, मंथर गति से चलती कार और ध्वनि प्रदूषण मुक्त वातावरण से मन प्रसन्न होता है।

सड़क के दोनों तरफ घने जंगल, हरीतिमा का अद्‌भुत नज़ारा दिखता है।

इन जंगलों में खौफनाक जानवर शेर, चीते, हाथी नहीं हैं। सांप भी नहीं हैं।

केवल गिलहरी, कबूतर, खरगोश, चूहे इत्यादि हैं। भारतीय गौरैया बिंदास उड़ती, चीं, चीं करती कई जगह दिखीं। होटल के लाउंज में इस तरफ उड़ना मुझे लुभावना लगा। मुझे भारत में इस नन्हीं चिड़िया का सेम टू सेम रूप देख कर बहुत अच्छा लगा।

अब हमे शहर ''पार्ट लुई'' पहुँच रहे थे। यह भी क्षेत्रफल में छोटा किन्तु शान्त साफ़ और जनता में ''स्वानुशासन'' का गुण दिखाई पड़ा। दफ़्तरों में भी लोग सादे, सरल और कर्मशील, सहायक ही मिले।

अब हम रिहायशी इलाके में पहुँचे। यहाँ घर भी सादे, एक या दो मंजिलें ही ज्यादातर हैं। ऊँची अट्टालिकाएँ या शानदार भवन नहीं दिखे।

प्राचीन सत्य यह है कि हमारे ये भारतीय लोग जो मॉरीशस के पूर्वज हैं, उ. प्र., बंगाल, दक्षिण भारत, राजस्थान तथा अन्य प्रान्तों से मॉरीशस एक बड़े पानी के प्रथम जहाज ''लाला रूख़'' में भर कर यहाँ मजदूरी करने के लिए लाए गये थे। गरीबी से उबरने और दबाव भरे प्रलोभनों में ही ये लोग मॉरीशस, सूरीनाम जैसे देशों में स्थानान्तरित हुए थे। इन्हीं ''गिरमिटिया'' जनों ने अपनी मेहनत से इस नये ''मॉरीशस'' का निर्माण किया।

लोगों को अनुशासन का भरपूर ज्ञान हैं। ज़ोर ज़ोर से चिल्लाना या दंगे फ़साद की गुन्जाइश नहीं है। वर्दी धारी पुलिस कर्मी नहीं दिखे।

सड़कों पर गड्ढ़े या जल भराव नहीं दिखा। लोग पान, गुटखा खाकर इधर–उधर नहीं थूकते न ही ये लोग कहीं भी मूत्र विसर्जन करते हैं। यह जागरुकता सफाई और अनुशासन अच्छा लगा।

इनके पहरावे भी कोई खास नहीं है। सभी लोग आजकल के आराम देह, सादे और साफ़ वस्त्रों में दिखे।

भोजन यहाँ हर प्रकार का उपलब्ध है। पारम्परिक भारतीय भोजन और आधुनिक भोजन भी है।

यहाँ के लोग शिक्षित हैं। जिन्हें उच्च शिक्षा नहीं मिली, वे भी सादी, कामचलाऊ अंग्रेजी, हिन्दी बोल लेते हैं। ऊँचे स्तरों पर तैनात अफ़सरों में भी एक सादगी और व्यवहार कुशलता है।

यहाँ की स्थानीय भाषा ''क्रियाल'' ही आम बोलचाल की भाषा है।

यहाँ के लोगों से मेरी बातचीत हुई। ज्यादातर लोग मॉरीशस में भारत के ही विभिन्न प्रान्तों से यहाँ आकर बस गये हैं।

प्राचीन सत्य यह है कि हमारे ये भारतीय लोग जो मॉरीशस के पूर्वज हैं, उ. प्र., बंगाल, दक्षिण भारत, राजस्थान तथा अन्य प्रान्तों से मॉरीशस एक बड़े पानी के प्रथम जहाज ''लाला रूख़'' में भर कर यहाँ मजदूरी करने के लिए लाए गये थे। गरीबी से उबरने और दबाव भरे प्रलोभनों में ही ये लोग मॉरीशस, सूरीनाम जैसे देशों में स्थान्तरित हुए थे। इन्हीं ''गिरमिटिया'' जनों ने अपनी मेहनत से इस नये ''मॉरीशस'' का निर्माण किया।

ये मजदूर धीरे–धीरे जागृत हुए। इन्होंने अपने बच्चों को पढ़ाना शुरू किया।

कड़ी मेहनत और जागरण ने ही इनकी संतानों को गिरमिटिया से प्रबुद्ध और उच्च पदों पर कार्यरत होने का सुअवसर प्रदान किया।

मॉरीशस में अल्पसंख्यक बहुत कम हैं। अफ्रीका से भी पलायन हुआ और धीरे–धीरे यह लोग भी मॉरीशस की जन संस्कृति में विलय होते चले गये।

इस तरह इनमें आपसी मेल जोल होता गया। अब ये लोग विवाह आदि भी करने लगे।

भारतीय संस्कृति मॉरीशस की नींव में हैं। यहाँ के लोग होली, दीपावली, दशहरा आदि कई अन्य तीज, त्यौहार, प्रसन्नता और पारम्परिक रूप से मनाते हैं।

''पार्ट लुई'' से हम फ्लेरिल पहुँचे। यहाँ भी शान्ति, सफाई और सादगी के दर्शन हुए। यहाँ मैं श्री सचिन जी से मिलने गई, जो निदेशक फ़िल्मे प्रभाग मॉरीशस हैं। उन्होंने दफ्तर से बाहर आकर मेरा स्वागत किया। यहाँ एक फ़िल्म निर्माण हेतु आश्वस्त होकर मैं आगे अन्य शहरों में गई।

मॉरीशस के अन्य शहर फिनिक्स पाई मोका आदि का भ्रमण एक ही बात कहता रहा सादगी, सफाई और प्रदूषण मुक्त वातावरण।

मोका पहुँच कर मैंने सर्वप्रथम इन्दिरा गाँधी के प्रतिष्ठान में प्रवेश किया।

सामने एक व्यक्ति हिन्दी बोल रहे थे। मैंने पूछा तो पता लगा ये हाई कमिश्नर हिन्दी है जो, यहाँ हिन्दी की सेवा हेतु तैनात हैं उन्होंने अपनी निदेशक से मुझे मिलवा कर जानकारी उपलब्ध कराने के लिए कहा।

किन्तु वह मुझसे कतराती रही।

मैंने देखा हिन्दी के प्रति यहाँ कुछ ज्यादा छनकर सामने नहीं आया। एक सर्वेक्षण से पता चला यहाँ योग की कक्षाएँ होती हैं। भविष्य में कुछ शिक्षा हिन्दी हेतु भी होगी।

यहाँ से मैं मोका के महात्मा गाँधी इस्टीट्यूट पहुँची। इतना प्राकृतिक सौन्दर्य, शान्ति, तथा सफाई सब कुछ मन लुभावना।

यह स्थान मियामी पहाड़ी की विशाल भुजाओं में आबद्ध है। भूरे हल्के नीले रंगों की ये मियामी पहाड़ियाँ किसी ऋषि जैसी लग रही थीं।

हरी घास का बिछौना नीले आकाश का चँदवा और साफ़ रेशमी हवाएँ मन में पुलक भर गईं। गेट से भीतर घुसते ही बापू की मूर्ति के दर्शन हुए। उन्हें प्रणाम कर मैं एक सफ़ेद बिल्ड़िग में गई। यहाँ कक्षाएँ चलती हैं।

दूसरी तरफ श्वेत ईंटों से सँवरी हुई एक और इमारत दिखी, वहाँ निदेशक का दफ़्तर है। मेरा स्वागत प्रेम पूर्वक किया गया। वहाँ उपस्थित कुछ लोगों से मेरी बातचीत भी हुई। यहाँ कई हिन्दी सेवी मिले।

हम आगे बढ़े मोका से पाई की यात्रा भी भरपूर शान्तिमय और प्रिय लगी। कूड़ा नहीं, लोग कम और सादे। विवेकानन्द प्रतिष्ठान भी अच्छा लगा। सबकुछ सादा, सरल और शान्तिमय।

पाई में कुछ आधुनिक आर्किटेक्चर देखने को मिला।

मॉरीशस में सितम्बर का महीना सर्दियों का था। यहाँ कड़कड़ाती सर्दी नहीं पड़ती। केवल एक गर्म कपड़ा यथेष्ठ होता है।

मौसम, कभी प्रचण्ड सूर्य और कभी बारिश, हल्की, फुल्की होती है फिर बन्द हो जाती है।

इस मौसम में हमें एक ठेले पर आम दिखा। हमारे ड्राइवर ने कहा ''आप आम खाइए, मैं लाता हूँ।'' मॉरीशस का रुपया मजबूत है। हमारे दो रुपया, उनका एक रुपया होता है।

मॉरीशस में मुख्य उपज गन्ना ही है। दूर–दूर तक फैले हुए गन्ने के खेत दिखे। मॉरीशस में गन्ने का भारी व्यवसाय है।

यहाँ आलू की खेती भी होती है।

होटल व्यसाय भी खूब फलता फूलता है। यहाँ पर्यटन राजस्व का विशेष ज़रिया है। मॉरीशस में अमरीका जापान, चीन, अफ्रीका, लंदन तथा भारत से ज्यादा पर्यटक भ्रमण करने स्वयं को तरोताजा और मुग्ध करने आते हैं।

कुल मिलाकर मॉरीशस एक ऐसा प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर देश है, जहाँ आप कम खर्चे में भी पर्यटन का पूरा आनंद प्राप्त कर सकते हैं।

तो फिर आइए न ''मॉरीशस''। कुछ समय प्रकृति की गोद में आराम करिए, प्रसन्न होइए। विश्व के किसी भी देश में मैं भ्रमण करूँ। किन्तु अपना प्यारा भारत सदा याद आता रहता है। इसी लिए कहती हूँ।

मेरे प्यारे वतन, तुमको सौ–सौ नमन।
तेरी पूजा करूँ, मैं करूँ वंदन।।
मैं जहाँ में जहाँ भी रहूँ ए वतन।
तेरी माटी की खूशबू से महके ये मन।।

पता : 4/151 विशाल खण्ड,
गोमती नगर, लखनऊ
मो. : 9838661663

काश

❑ उषा सक्सेना

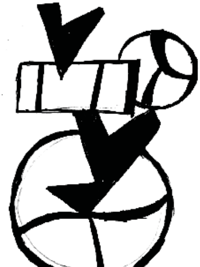

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के महिला छात्रावास के भोजन कक्ष में सायंकाल 4 बजे छात्राओं की बड़ी भीड़ थी कक्षाएं समाप्त होने के बाद सब चाय, नाश्ते के लिए एकत्रित थीं। चारों ओर गूंज रही थीं प्लेट प्यालों की खटर–पटर छुरी कांटों की खनखनाहट, छात्राओं के उन्मुक्त ठहाकों और फिल्मी गीतों की मधुर धुनें। इन सबसे अलग अंजू विश्वविद्यालय समाचार पत्र पढ़ने में संलग्न थी। उसकी सहेली रेशमा का ध्यान उसकी ओर गया उसने कहा। अरे अंजू चाय और समोसे ठंडे हो रहे हैं कहां है तुम्हारा ध्यान?

यहां है देखो विश्वविद्यालय समाचार पत्र रेशमा ने देखा समाचार पत्र के मुख पृष्ठ पर छपा था 'शीतकालीन सत्र' नीचे एक चित्र छपा था।

अरे ये तो रतलाम स्टेट की राजकुमारी पद्मा हैं और ये राजीव श्रीवास्तव। इनकी फोटो और वो भी 'बनियन ट्री' के नीचे बैठकर बढ़ते हुए रेशमा ने आश्चर्य से कहा।

अरे रेशमा आजकल विश्वविद्यालय में इन्हीं की चर्चा है। दोनों दिनभर साथ रहते हैं इतिहास में एम.ए. कर रहे हैं कक्षाएं समाप्त होती हैं तो कभी पुस्तकालय में, कभी अंग्रेज़ी विभाग के सामने लॉन में बनी हुई संगमरमर की बेंचों पर कभी बनियान ट्री के नीचे बैठे मिलते हैं। दोनों के हाथ में किताबें और नोट्स होते हैं राजीव पढ़ाता रहता है राजकुमारी जी को। कभी–कभी शाम को छात्रावास के विज़िटर्स कक्ष में दोनों बैठे रहते हैं वहां भी राजीव उन्हें बड़े मनोयोग से पढ़ाता है– राजीव अपने बैच का टॉपर है।

अरे अंजू राजीव को कौन नहीं जानता। स्वर्ण पदक मिला था बी.ए. में सर्वाधिक अंक पाने के लिए क्या पद्मा जी खुद नहीं पढ़ सकतीं जो राजीव का समय बर्बाद करती हैं, रेशमा बोली।

पढ़ने में मन लगे तब न। बड़ी स्टेट की राजकुमारी है। दो सहेलियाँ शिप्रा और राधा साथ भेजी गई हैं वे इनकी देख रेख करती हैं और स्वयं भी पढ़ रही हैं। पत्रकारिता में एम.ए. कर रही हैं दोनों। इन्हें इतिहास विभाग में पहुंचाकर पत्रकारिता विभाग चली जाती हैं ये कक्षाएं समाप्त होने पर राजीव के साथ पुस्तकालय चली जाती हैं वहां बैठकर दोनों पढ़ते रहते हैं। शाम को सिविल

लाइन्स में कभी कॉफी हाउस में कभी गजदर्स में बैठे दिखाई देते हैं।

अरे अंजू तुम्हें बड़ी जानकारी हैं राजकुमारी जी के बारे में? रेशमा ने आश्चर्य से कहा मुझे हैरानी इस बात की है कि इनके इस तरह मिलने में वार्डन ने कोई आपित्त नहीं की।

नहीं रेशमा—राजकुमारी के पिता यानी राजा साहब जब आए थे तो पद्मा जी ने उनसे राजीव को मिलवाया— राजीव से वे बहुत प्रभावित हुए और उसका नाम 'विज़िटर्स लिस्ट' में लिखवा दिया।

आहे तभी राजीव अक्सर छात्रावास आता है और इन्हें पढ़ाता है।

हां रेशमा इनका मन पढ़ाई के अलावा हर काम में लगता है गायन, वादन, नृत्य, नाटक सभी में भाग लेती हैं तैराकी प्रतियोगिता में भी अव्वल रही थीं।

अच्छा अंजू तुम्हें ये सब कैसे पता? रेशमा बोली इनकी सहेली शिप्रा से दोस्ती है मेरी— अरे चाय बिल्कुल ठंडी हो गयी। धन्नों—धन्नों दो प्याले गर्म चाय और गर्म समोसे तो लाना अंजू ने धन्नों को पुकार कर कहा—

अच्छा बिटिया जी—

धन्नो चाय समोसे लेकर आया। दोनों ने नाश्ता किया और टहलने चल दीं। छात्रावास से लगा हुआ बहुत बड़ा बाग था। वहां अमरूद के बड़े पेड़ थे। वहां के अमरूद बहुत मीठे होते थे— दोनों ने अमरूद खाये फिर वहां बने एक कुएं की जगत पर बैठ कर बातें करने लगीं।

अंजू और रेशमा अभिन्न मित्र थीं दोनों कालपी की रहने वाली थीं। दोनों क्रास्थवेट गर्ल्स कॉलिज से पढ़कर आई थी वहां भी एक कमरे में रहती थीं— साथ इलाहाबाद आती जाती थी— विश्वविद्यालय के छात्रावास में भी दोनों के कमरे पास—पास ही थे। रेशमा पढ़ने में बहुत तेज थी और अंजू गायन और नृत्य में। जब परीक्षाएं निकट होतीं तो रेशमा अंजू को पढ़ाती थी। अंजू का मन पढ़ाई के अलावा छात्रावास की गतिविधियों में अधिक रमता था और आजकल तो उसके आकर्षण का केन्द्र थीं। पद्माजी।

पद्माजी बहुत ही सुंदर थीं। दूध सा उजला रंग गठीला बदन, गोल चेहरा, खुलवां नाक, बड़ी—बड़ी हिरणी सी आंखें घने काले लम्बे घुंघराले बाल और मोहक हंसी। अप्सराओं जैसा रूप था। उनकी सहेली शिप्रा ने बताया था राजकुमारी जी राजा साहब की लाड़ली बेटी हैं। तीन भाइयों से छोटी हैं। राजा साहब ने उन्हें बचपन से तैरना सिखाया था घुड़सवारी और शस्त्र संचालन की शिक्षा भी दी— और अच्छी से अच्छी शिक्षा दी—। राजा साहब की ही इच्छा है कि वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में एम.ए. करें। वे स्वयं यहां के भूतपूर्व छात्र रहे हैं। राजकुमारी को रींवा स्टेट के राजा साहब ने अपने बेटे के लिए पसंद कर लिया है रानी साहिबा अंग्रेज़ी में एम.ए. हैं स्टेट का काम भी संभालती हैं। पद्मा जी के पिता जी चाहते हैं कि वो भी एम.ए. प्रथम श्रेणी में करें तभी उन्होंने इन्हें यहां भेजा है क्योंकि इस विश्वविद्यालय का बहुत नाम है उन्होंने राजकुमारी से कह रखा है कि यदि एम.ए. प्रथम वर्ष में अच्छे अंक नहीं आये तो वे उनकी पढ़ाई छुड़ा देंगे। पद्मा जी की अध्ययन में उतनी रुचि नहीं है इसी कारण उन्होंने राजीव से मित्रता की है।

अरे अंजू वार्ता में समय का पता नहीं चला अंधेरा घिर आया है अपने कमरे में चलो दोनों कमरे में आ गईं और पढ़ने में व्यस्त हो गईं दोनों बी.ए. द्वितीय वर्ष में थीं।

समय द्रुत गति से भाग रहा था। परीक्षाएं निकट थीं। राजीव बहुत मेहनत कर रहा था। स्वर्ण पदक पाने के उपरांत उसकी पढ़ाई में लगन— और बढ़ गई थी। एम.ए. में भी उसे टॉप करना है इस उद्देश्य को लेकर चल रहा था। रात रात भर जाग कर पढ़ाई करता और कुछ नोट्स राजकुमारी के लिए बनाता। समय निकाल कर उसे पढ़ाने भी चला जाता उसके बचपन के मित्र को राजीव का पद्मा के प्रति इतना लगाव देखकर अच्छा नहीं लगता था। वो और राजीव बचपन के मित्र थे। उसका नाम था संजीव। राजीव बुलन्दशहर के प्रख्यात एडवोकेट कमलनाथ श्रीवास्तव का बेटा था और संजीव उनके जूनियर सचिन चौधरी का पुत्र था। राजीव से दो साल सीनियर था लॉ कर रहा था एक तरह से राजीव का संरक्षक था। दोनों हिन्दू हॉस्टल में रहते थे— वहां से महिला छात्रावास दूर था तो संजीव बाइक पर राजीव को छोड़ देता था जितनी देर राजीव पद्माजी को पढ़ाता वो सामने पार्क में पड़ी बेंचेज़ पर बैठा रहता— कुछ पढ़ने को ले आता था। राजीव जब आ जाता तो उसे लेकर छात्रावास लौट आता था। प्रायः रोज ये ही क्रम चलता था।

उसे राजीव की राजकुमारी से मित्रता अच्छी नहीं लग रही थी। उसे मित्रता में स्वार्थपरता की दूषित गंध आ रही थी— उसने राजीव को बहुत समझाया कि दोस्ती बराबर की हैसियत वालों में होती है— कहां राजकुमारी और कहां तुम? लेकिन राजीव तो पद्मा के मोहपाश में आबद्ध था। उसके लिए शार्ट नोट्स बनाता और गेस पेपर भी। कभी दोनों सिविल जाते तो कभी— कॉफी हाउस में बैठते वहां भी पद्मा जी पढ़ाई की चर्चा ही करती थीं। परीक्षायें हो गईं। कुछ महीनों बाद परिणाम घोषित हुआ। अच्छा ही रहा था। राजीव ने सदा की भांति एम.ए. प्रथम वर्ष में टॉप किया था। उसके पचहत्तर प्रतिशत अंक आये थे और राजकुमारी के बासठ प्रतिशत— वो अत्यन्त प्रसन्न थी क्योंकि उसने अपने पिताजी की इच्छा को पूरा किया था।

जुलाई में वे बड़े उत्साह से भरकर विश्वविद्यालय आईं थीं। इस बार उनके चेहरे पर अनूठा लावण्य और व्यक्तित्व में आत्मविश्वास झलकता था। अब उनका भी झुकाव पढ़ाई की ओर हो गया था– राजीव ने उन्हें पढ़ाई की ओर उन्मुख कर दिया था। इस वर्ष भी उनकी वही दिनचर्या रही–पुस्तकालय, अंग्रेजी विभाग के सामने बने लॉन में, बनियन ट्री के नीचे बैठकर राजीव से पढ़ना शाम को अक्सर सिविल लाइन्स में घूमना– इस बार इलाहाबाद की हर वर्ष लगने वाली स्वदेशी प्रदर्शनी में भी राजीव के साथ घूमती दिखाई देती थीं– इस प्रदर्शनी में अधिकतर विश्वविद्यालय के छात्र–छात्राएं ही दिखाई देते हैं माघ मास में लगने वाला संगम के तट का माघ मेला भी विद्यार्थियों को बहुत आकृष्ट करता है। मेले में घूमने का एक अजीब नशा होता है प्रयागराज के लोगों में और विद्यार्थियों में तो अनूठा उत्साह होता है। राजीव और पद्मा जी पढ़ते भी बहुत थे और इन स्थानों पर भी घूमते थे। समय द्रुत गति से भाग रहा था अंजू रेशमा ने हिन्दी में एम0ए0 में प्रवेश लिया था– वहां बड़े प्रतिष्ठित साहित्यकार पढ़ाते थे। फरवरी आते–आते विश्वविद्यालय में पढ़ाई का वातावरण आ गया था– राजीव पिछले साल की तरह इस बार भी पद्मा जी को पढ़ाने छात्रावास आता था। अधिक समय नहीं दे पाता था क्योंकि उसे तो सर्वाधिक अंक प्राप्त करने की लगन थी।

परीक्षा से पहले उसने कुछ शार्ट नोट्स और अंदाज़ से मुख्य प्रश्न छांटकर उनके उत्तर भी संक्षिप्त में लिखकर पद्माजी को दे दिए थे। वो भी बहुत मेहनत कर रही थीं। पापा की इच्छा पूरी करने का अनूठा उत्साह था उनमें।

समय जैसे भाग रहा था– परीक्षाएं आ गईं राजीव के पेपर्स बहुत अच्छे हुए थे– बड़ी मेहनत की थी उसने और पद्मा जी भी बहुत खुश थीं। राजीव ने उन्हें पढ़ाने में अपना पूरा सहयोग दिया था। वो भी बहुत प्रसन्न थीं कि वे प्रथम श्रेणी में परीक्षा में पास होंगी मौखिकी में उनके परीक्षक बहुत प्रभावित हुए। अपने मोहक व्यक्तित्व और वाक्पटुता से सबको प्रभावित कर लिया था उन्होंने परीक्षकों के प्रश्नों के उत्तर भी बहुत अच्छे दिए थे। वह बहुत प्रसन्न थी।

परीक्षा समाप्त होने के बाद छात्राएं घर लौटने की तैयारी में व्यस्त थीं। पद्मा जी को अपनी स्टेट लौटने का अनूठा उत्साह था कहां राज्य बन स्वच्छंद जीवन और कहा छात्रावास में नियमों से बंधा जीवन। वे अपने कमरे में विश्राम कर रही थीं उनकी सहेलियां कुछ सामान खरीदने के लिए कटरा बाज़ार गई हुई थीं। तभी चौकीदार ने आकर कहा राजकुमारी जी राजीव भैया आए हैं।

पद्मा राजीव से मिलने चल दी। आज जैसे उसमें राजीव से मिलने का कोई उत्साह न था राजीव सदा की तरह आगन्तुक कक्ष में उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। पद्मा को देखते ही उसका चेहरा खिल उठा उल्लास से भरकर बोला।

हैलो पद्मा बधाई सुना है तुम्हारी मौखिकी परीक्षा बहुत अच्छी रही–

हां, राजीव। मैं परीक्षकों के उत्तर देने में सफल रही। भई श्रेय तो तुम्हें जाता है तुमने मुझे इतने चाव से पढ़ाया नोट्स बनाये तुम्हें बहुत–बहुत धन्यवाद।

मात्र धन्यवाद देने से काम नहीं चलेगा तुम्हें ट्रीट देनी होगी।

ज़रूर देती पर अब संभव नहीं घर जाने की जल्दी में हूं पैकिंग करनी है। सायंकाल 6 बजे की फ्लाइट है। कोई बात नहीं फिर कभी सही। घर जाने की खुशी में हो देखकर अच्छा लग रहा है। मेरी अगणित शुभकामनाएं। बाद में तो तुम्हें लौटकर आना ही है। राजीव ने उल्लास से भरकर कहा–

क्यों? मैं क्यों लौटूंगी मुझे कौन सी पी.एच.डी करनी है पद्मा बोली।

अरे भई मुझे तो करनी है और हम इतने दिन एक साथ बैठकर पढ़ाई करते रहे वो वक्त ?? जाओगी..... दो साल पलक भरते ही बीत गए पद्मा। मैं पी.एच.डी करूंगा और तुमसे ब्याह.......

ब्याह का नाम सुनते ही पद्मा का चेहरा तमतमा उठा वह क्रोध से भर उठी और बोली ब्याह? और तुम जैसे मध्यवर्गीय युवक से? वाह राजीव वाह! अपनी औकात भूल गए क्या? तुमने मेरी पढ़ाई में मदद कभी कर दी मुझसे ब्याह के सपने देखने लगे। मत भूलो राजीव कि मैं बहुत बड़ी स्टेट की राजकुमारी हूं और तुम? खैर जाने दो किसी गलत फहमी में न रहना। मदद के लिए धन्यवाद चलती हूं, गुड बॉय गुड बॉय फॉर एवर।

पद्मा तमक कर चली गई थी और राजीव हतप्रभ रह गया वो बड़े चाव से आया था अपनी बात कहने। संजीव को बता दिया था कि आज वो पद्मा को प्रपोज़ करेगा। संजीव ने उसे मना भी किया था पर वो उत्साह में था। वो सोचता था पद्मा भी उससे प्यार करती है कितनी प्यारी बातें करती थी जब स्टेट जाती थी तो उसके लिए ढेरों उपहार लेकर आती थी वहां से बराबर फोन करती थी और आज एक पल में सम्बन्ध तोड़कर चली गयी। वो मन लगाकर पढ़ना, हर जगह एक साथ घूमना, हर समय अपने विषय पर चर्चा करना क्या ये सब इसलिए था कि मैं उसकी पढ़ाई में मदद कर खैर ओह! कितनी स्वार्थी निकली मुझे मध्यवर्गीय कहकर बुरी तरह अपमानित करके चली गई। ओह! मैंने चांद को छूने का प्रयास किया था। राजीव हतप्रभ था जिसकी बोली में शहद जैसी मिठास थी व्यवहार में अपनापन था जिसके लिए उसने दो वर्ष तक परिश्रम किया था रात–रात भर जग कर उसके लिए भी नोट्स बनाये थे जिसके कारण उसके इतने अच्छे

अंक आए थे उसे एक पल में पराया कर दिया। ओह! कितनी स्वार्थी निकली पद्मा? परीक्षा समाप्त होते ही निगाहें फेर लीं। मध्यवर्गीय कहकर अपमानित किया। कितने नुकीले तानों से उसका हृदय आहत कर दिया। जिंदगी ने कैसा अचानक मोड़ लिया था वह थोड़ी देर बैठा रहा फिर डगमगाते कदमों से उठा और छात्रावास के बाहर आया। बाहर संजीव उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। उससे बताकर आया था। संजीव ने राजीव को संभाला फिर बाइक पर बिठाकर छात्रावास ले आया उसे पकड़कर कक्ष में लाया पानी पिलाया और संभाल कर बिठाया। राजीव उसके कंधे पर सिर रखकर बिलख बिलख कर रोने लगा।

नहीं मेरे दोस्त मेरे राजीव मेरे छोटे भैया अपने आपको संभालो। मैं हूं ना तुम्हारे साथ तुम्हारा भाई मैंने तुम्हें कितना समझाया था कि दोस्ती बराबर वालों में होती है उसमें स्वार्थ की दूषित गंध नहीं होती पर तुम्हारा निश्छल मन नहीं समझ सका। तुमने मेरी बात नहीं मानी मेरे भाई। राजकुमारी ने तुमसे मात्र प्रथम–श्रेणी में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए मित्रता की थी ये तो अच्छा रहा कि तुम अपनी भी तैयारी पूरी लगन के साथ करते रहे कि तुम्हें प्रथम आना है। इस साल को तुम नहीं भूले कि तुम्हारे प्रोफेसर्स को तुमसे बहुत आशायें हैं। तुम्हारे प्रोफेसर्स तुम्हें बराबर उत्साह से भरते रहे अपने उद्देश्य को तुम विस्मृत नहीं कर सके यही अच्छा रहा उसकी भलाई तुमने की और उसके मीठी बातों से तुम्हें सम्मोहन में बांध लिया–

संजीव भैया मैं मध्यवर्गीय हूं वो स्टेट की राजकुमारी वो यही दोहराती रही बार–बार। भैया उसे मैंने हृदय से प्यार किया और उसने पल भर में शीशे की तरह के मेरे हृदय पर आघात करके तोड़ दिया। मेरे मन दर्पण में उसी की छवि थी भैया मेरे कानों में उसके शब्द गूंज रहे हैं भैया। सिर में भयंकर दर्द हो रहा है उसने ऐसा क्यों किया भैया राजीव संजीव से लिपट कर बिलख–बिलख कर रोने लगा।

नहीं राजीव मेरे प्यारे भाई संभालो अपने आपको। मैं हूं न तुम्हें इस तरह टूटने नहीं दूंगा। सोच लो राजीव एक भूचाल आया था धीरे–धीरे शांत हो जाएगा। मत भूलो राजीव कि चाचाजी को तुम से कितनी आशायें हैं बचपन से अब तक तुम प्रथम ही आते रहे हो इस बार भी टॉप करोगे। तुम तो विश्वविद्यालय का जगमगाता रत्न हो ऐसे हिम्मत नहीं हारनी है तुम्हें। प्रोफेसर्स को कितनी आशा है तुमसे। भैया मेरे तुम्हारा नाम राजीव है और जानते हो राजीव कमल को कहते हैं कमल कीचड़ में खिलता है पर उस पर कीचड़ की एक बूंद भी नहीं ठहरती राजकुमारी का प्यार कीचड़ की तरह है और तुम कमल की तरह। अब समझ लो तुममें कितनी कमनीयता है– बस बस अब आंसू नहीं....

संजीव रात भर राजीव को समझाता रहा था– एक दार्शनिक की भांति जीवनदर्शन को बताता रहा था– पौ फटी थी– नीले आकाश में अरुणिम सूर्य उदित हो रहा था लग रहा था जैसे आकाश के मस्तक पर किसी ने सिंदूर का टीका लगा दिया है– संजीव ने राजीव का ध्यान उस उदीयमान सूर्य की ओर आकर्षित किया और बोला–

देखो प्राची में सूर्य उदित हुआ है और इसकी स्वर्णिम ??? किरणों से कमल खिल रहे हैं तुम्हारा मुखमंडल इसी तरह खिल रहा है नयी सुबह हो रही है तुम्हारा रूप और कमनीयता स्वयं बिखर रही है।

राजीव का मन शांत हो चुका था– वह संजीव से लिपट कर बोला 'भैया आप मेरे लिए भगवान हैं– अब अतीत में नहीं जीवित रहूंगा– भावना से कर्तव्य महान होता है। भैया मैं सामान्य होने का प्रयास करूंगा।

राजीव को संतुलित करने में संजीव जैसे प्यारे दोस्त बन ही हाथ हो सकता पर राजीव ने प्रण किया था कि वो संतुलित होने का प्रयास करेगा। उसने तो संकल्प कर लिया था। संजीव के प्रयास से वह सामान्य हो चला था मगर राजकुमारी? उसका अन्तर्मन हाहाकार कर रहा था। वो कितनी निर्ममता से राजीव को झिड़ककर छात्रावास आ गई थी। सच तो ये था कि उसे तीन दिन बाद स्टेट जाना था। बड़े भैया उसे लेने आने वाले थे वे तीनों उन्हीं के साथ जाने वाली थीं। उसकी सहेलियां बाज़ार गई थीं वो चुपचाप अपने बिस्तर पर लेट गई। उसने एक भोले भाले व्यक्ति का हृदय तोड़ दिया था। कितना निश्छल कितना प्यारा है राजीव। गत दो वर्षों में उसने कितना साथ दिया था पद्मा का किताबें लाकर देना, नोट्स तैयार करना घंटों पढ़ाना। पद्मा का तो मन पढ़ाई में लगता ही नहीं था पर राजीव की प्रेरणा लगन और मेहनत से ही उसके अच्छे अंक आए थे। उसके पेपर्स, मौखिकी सबका श्रेय राजीव को जाता है। उसने पद्मा को नई दिशा दी थी उसमें आत्मविश्वास जगाया था और उसने क्या किया? उसे धोखा दिया।

ओह्! ये भी सच नहीं है। वो भी राजीव को बहुत प्यार करने लगी थी पर राजीव को कैसे बताये अपनी विवशता। वह उसे हृदय की गहराइयों से चाहती है पर अपनी सीमा नहीं लांघ सकती। अगर उसके भैया–पिताजी को इसकी भनक भी लग जाती तो क्या वे उसे जीवित छोड़ते। बंदूक की गोलियां उसे छलनी कर देतीं– राजीव का दिल तोड़ना उसे मध्यवर्गीय कहकर अपमानित करना ही एकमात्र उपाय था। आज उसे अहसास हुआ कि वह कितनी दुर्बल है काश काश वह राजकुमारी न होती काश। ■

पता : ''साहित्य भूषण'', 612, आनंद ऐश्वर्य अपार्टमेंट,
सिविल लाइंस, कानपुर नगर–208001
मो. : 9335262043

कुछ दिन और रुक जाते

❑ सियाराम पांडेय 'शांत'

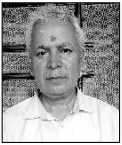

बरसात के दिन थे। मूसलधार वर्षा हो रही थी। कई दिनों से भगवान भास्कर के दर्शन नहीं हुए थे। इतनी बरसात के बीच काम पर जाना तो और भी कठिन है। और अगर जा भी पाता तो क्या जरूरी था कि उसकी मेहनत रंग लाती ही। रोज कुआं खोदने और पानी पीने वालों पर मौसम की मार अक्सर भारी पड़ती है। काम उसे न तो किसी दफ्तर में करना था और न ही किसी फैक्ट्री में। उसका दफ्तर तो खुले आसमान के नीचे था। सड़क की फुटपाथ ही उसके ठहरने और कमाई का जरिया थी लेकिन इस मुई बरसात ने उससे वहां जाने की हिम्मत भी छीन ली थी। आज तो जैसे–तैसे चूल्हा जल गया था लेकिन कल की चिंता में वह अंदर ही अंदर घुला जा रहा था।

काम क्या था, इस भरी दुनिया में कहीं कोई रोजगार न मिला, कहीं कोई नौकरी न मिली तो रिक्शा चलाना शुरू किया। पहले रिक्शा किराए का होता था। भला हो उस आदमी का जिसकी मेहरबानी से आज उसके पास अपना रिक्शा है। इस रिक्शे को चलाकर सरयू को बेहद आत्मतोष होता है।अपना तो अपना ही होता है।

वह याद करता है कि उस दिन को जब कुंतल भर वजन का एक मोटा आदमी उसके रिक्शे पर बैठ गया था और चारबाग चलने का आदेश दिया था। उस व्यक्ति को चारबाग तक ले जाने में जाड़े की ठंड में भी सरयू को पसीने आ गए थे। मन ही मन उसे गरियाता भी जा रहा था कि कौन सी मुसीबत उसके गले आ पड़ी। किराया तो एक सवारी का ही मिलना था और मेहनत दोगुनी करनी पड़ रही थी। चारबाग पहुंचने पर उस आदमी ने कहा कि बहुत अच्छा। रिक्शा ठीक चला लेते हो। जवान हो। ऐसे ही मेहनत करते रहो। बहुत तरक्की करोगे। उनकी बातों में सहानुभूति भी थी और एक शुभचिंतक की सदाशयता भी थी। फिर उन्होंने पूछा कि यह बताओ कि रिक्शा तुम्हारा है। सरयू क्या कहता? उसने सिर झुका लिया। उन्होंने फिर कहा–बताते क्यों नहीं? रिक्शा तुम्हारा है या किराये का। सरयू ने कहा–किराये का? उन्होंने कहा कि किराये के रिक्शे से क्या बचेगा? अपना रिक्शा क्यों नहीं लेते। अब सरयू से नहीं रहा गया। उसने कहा–बाबूजी, पापी पेट पालें या रिक्शा खरीदें। वे बोले कि रिक्शा भी खरीदो और पेट की भी चिंता करो। जो बड़ा नहीं सोचते, वे आगे नहीं बढ़ पाते। अच्छा बोलो कितना किराया हुआ तुम्हारा?

सरयू ने कहा–बस तीन रुपये बाबू जी।

उन्होंने कहा कि ये रहे तीन रुपये लेकिन मुझे कहीं और चलना है लेकिन तुम्हारे काम से और याद रखो, वहां से मुझे यहां लाकर छोड़ना भी है लेकिन इसके मैं तुम्हें फूटी कौड़ी भी नहीं दूंगा। समझे।

सरयू बोला कि मैं कुछ समझा नहीं। मेरा यहां कोई काम नहीं है। उन्होंने कहा कि तुम नहीं समझोगे। मैं जहां कह रहा हूं, चलो और उन्होंने अपना रिक्शा हीवेट रोड की ओर मुड़वा दिया और वाजपेयी की दुकान पर पहुंचते ही रिक्शा रोकने का इशारा किया। उन्हें देखते ही वाजपेयी जी हाथ जोड़कर खड़े हो गए। अरे जालान साहब आप। आपने यहां आने की जहमत क्यों की? आदेश कर देते। बंदा आपकी ख़िदमत में हाजिर हो जाता। खैर क्या लेंगे। ठंडा या गरम। जालान साहब ने उन्हें प्रणाम किया कि ब्राह्मण तो साक्षात भगवान का रूप है। उसके दर्शन हो जाएं। आशीर्वाद मिल जाएं तो इससे बड़ी बात क्या हो सकती है? मेरी एक ही इच्छा है कि एक रिक्शा का कर आप इस बच्चे को दे दें और उसकी क्या कीमत हुई, बता दें। उन्होंने कहा कि पैसे की क्या बात है? हम आपसे अलग थोड़े ही हैं। एक रिक्शे की डिलीवरी आज ही देनी है लेकिन पार्टी नहीं आई। हो सकता है कि वह पैसे की व्यवस्था न कर पाई हो। वह रिक्शा अभी आपकी खिदमत में हाजिर करता हूं। उनका संकेत मिलते ही नौकर कारखाने से रिक्शा ले आया। जालान साहब ने उसे ऊपर से लेकर नीचे तक देखा और कहा कि बर्खुरदार कैसा है? सरयू कुछ बोल न पाया और सरयू से कहा कि अब से यह रिक्शा तुम्हारा है। रिक्शे के तीन सौ रुपये वाजपेयी को थमाकर वे नए रिक्शे पर बैठ गए। सरयू ने उन्हें चारबाग छोड़ दिया। वहां से वे रायबरेली चले गए लेकिन उनकी महानता की निशानी यह रिक्शा सरयू के लिए प्राणों से भी अधिक प्रिय है। वह आज भी सोचता है कि धरती पर इतने अच्छे लोग भी होते हैं जो नुकसान सहकर भी दूसरों का भला चाहते हैं। उसकी आंखें इस बात को सोचकर अक्सर सजल हो उठती हैं। यह रिक्शा उसे उसके पुराने दिनों की याद दिलाता है।

सरयू ने किराए के रिक्शे चलाकर होने वाली परेशानी को बेहद नजदीक से झेला था। किराये के रिक्शे के साथ समस्या यह होती थी कि उस पर कोई बैठे या न बैठे, किराए के पैसे तो रिक्शा मालिक को देने ही पड़ते थे और कदाचित् रिक्शे का कुत्ता फेल हो जाए, चेन टूट जाए या ढीली हो जाए। पहिए में हचक आ जाए तो खरी–खोटी भी सुननी पड़ती थी। कई बार तो उसे बनवाना तक पड़ जाता था।

कालू था भी ऐसा ही।जैसा नाम वैसा ही दिल, वैसा ही स्वभाव। रिक्शा चालकों को आए दिन बेइज्जत करता रहता। कई बार तो वह उन पर हाथ भी छोड़ देता था। वह यह मानने को तैयार ही नहीं होता कि आज कोई सवारी नहीं मिली। उसकी जगह कोई भी होता तो यही सोचता। वैसे देश में झूठों की कमी तो है नहीं। फायदे के लिए कायदे बिगाड़ना आम बात है। कालू कढा हुआ आदमी था। दुनिया नजदीक से देखी थी उसने। रिक्शा चालकों की फितरत से वाकिफ था। उसे पता था कि दिन भर का थका रिक्शा चालक कैसे शाम को मदिरालय की लाइन में लग जाता है। रोटी तो ढंग की खाता नहीं, बीड़ी सुलगाकर दिल जरूर जलाता रहता है।

सरयू के साथ भी उसने कई बार अभद्रता की थी। शायद वह सरयू के सच और झूठ का आकलन नहीं कर पाया था। सरयू की नेकनीयती और ईमानदारी उसे प्रभावित नहीं कर पाई थी। चालबाजों की भीड़ में कब किसका सम्मान सुरक्षित रहता है। सरयू के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ था। वह गेहूं के साथ घुन की तरह खुद को पिसा महसूस कर रहा था।

सरयू बहराइच के एक गांव से रोजगार की तलाश में लखनऊ आया था। छोटी उम्र में ही उसकी शादी हो गई थी। कुछ समय तो ठीक रहा लेकिन जल्द ही उसे परिवार के भरण–पोषण की चिंता सताने लगी और वह इसी उधेड़–बुन में लखनऊ आ गया। यहां उसने पहले तो काम के लिए खूब–हाथ पैर मारे लेकिन उसकी दाल न गली। इसकी वजह शायद उसकी निरक्षरता भी थी। इस बीच उसकी मुलाकात दिनेश से हो गई और उसने उसे चारबाग के कालू से मिलवा दिया था। उसे किराए का रिक्शा मिल गया था। वह रोज 8–10 रुपए कमाने लगा। तीन रुपए रिक्शे के किराए में निकल जाते। कई बार ऐसा भी हुआ कि दिन भर इंतजार के बाद भी उसे सवारी न मिली और शाम को जब उसने खाली हाथ रिक्शा लौटने की कोशिश की तो उसे कालू के अपशब्द तो सुनने ही पड़े, उसके थप्पड़ भी खाने पड़े। गरीबी में इस तरह की जलालत आम बात है। सरयू ने नियति से समझौता सा कर लिया था। मरता क्या न करता। दूसरा विकल्प भी तो नहीं था। बात जब परिवार के भरण–पोषण की हो तो इस तरह के फैसले न चाहते हुए भी करने ही पड़ते हैं। नाबदान के किनारे बैठकर कोई उसकी दुर्गन्ध से परहेज करे भी तो किस तरह?

सरयू के विचार केंद्र में बरसात थी। बरसात में वह घर से निकले भी तो उसके रिक्शे पर बैठेगा कौन? यह सवाल उसे अंदर तक खाए जा रहा था। लेकिन कहते हैं न कि जब व्यक्ति के सामने कोई रास्ता नहीं होता तब ईश्वर उसे कोई न कोई राह दिखा ही देता है। सेठ विपुल चंद की कार पंक्चर हो गई थी उस दिन। बहू को लेबर पेन शुरू हो गया था। वे दौड़े–दौड़े सरयू के पास आए और जल्दी रिक्शा निकालने को कहा। उस भरी बरसात में बहू को लेकर हॉस्पिटल पहुंचे। वहां उन्हें पौत्र हुआ। सरयू को खुशी में 200 रुपए भी दिए और आभार भी माना।

दो दिन में बरसात रुक गई। सरयू की गाड़ी पटरी पर

आ गई। वह थोड़े–थोड़े पैसे बचाकर अपने बेटे श्याम को पढ़ाने लगा। वह अपने बेटे को पढ़ा–लिखा कर एक अच्छा आदमी बनाना चाहता था लेकिन चाहत सबकी तो पूरी होती नहीं। उसका बेटा नौवीं में तीन विषयों में फेल हो गया और इसके बाद उसने आगे पढ़ने से ही इनकार कर दिया सरयू के सपनों पर घड़ों पानी पड़ गया।

इकलौता बेटा था। उसे डांट–मार तो सकता था नहीं। उसे पता था कि किशोर वय बावरी होती है। बेटा गुस्से में ऐसा–वैसा कर बैठे तो वह कहीं का नहीं रहेगा। यही सोचकर उसने नियति से समझौता कर लिया। लेकिन श्याम के न पढ़ने के निर्णय ने उसे अंदर तक झिंझोड़ दिया था। वह टूट सा गया था। क्या सोचा था और क्या हो गया? वह गरीब था लेकिन अपने बेटे का दामन खुशियों से भर देना चाहता था। वह उसे गरीब और अभावग्रस्त नहीं देखना चाहता था।

उसे पता था कि शिक्षा व्यक्ति की हर समस्या के समाधान की कुंजी है। खुद नहीं पढ़ा तो क्या? बेटे को तो पढ़ा ही सकता था। हर बाप की चाहत होती है कि उसका बेटा खूब पढ़े–लिखे। आगे जाए ताकि वह अपनों के बीच शान से सिर उठाकर कह सके कि मेरा बेटा है। यह सच है कि वह श्याम को धनिकों जैसी सुविधा नहीं दे सकता था लेकिन प्रतिस्पर्धा के मामले में उसकी हसरत धनिकों से जरा भी कम न थी।

उसे हमेशा यह बात टीसती रहती की उसके कम पढ़े–लिखे लड़के को नौकरी कौन देगा। दसवीं भी पास कर जाता तो रेलवे में छोटी–मोटी नौकरी पा जाता। फिर कहता कि ईश्वर सबको उसका भाग्य लिखकर भेजता है। उसके श्याम के भाग्य में शायद इतना ही पढ़ना बदा है।

बेटा भी आखिर कब तक बेकार बैठता। सो वह अपने साथियों के साथ कमाने की गरज से लुधियाना चला गया लेकिन कम पढ़ा–लिखा होने की वजह से उसे कहीं ढंग का काम न मिला। एक होटल में काम मिला भी तो बर्तन मांजने का। वह साल दस–साल नौकरी बदलता रहा लेकिन काम नहीं बदला। इस दौरान वह जब भी लखनऊ और बहराइच आया, उसने अपने पिता को यही बताया कि वह किसी कंपनी में क्लर्क है।

हालांकि उसके हाथ देख सरयू समझ तो गया था कि उसका बेटा झूठ बोल रहा है लेकिन वह उसे आहत नहीं करना चाहता था। वह उसे देखकर दुखों से भर जाता लेकिन उसे अपने चेहरे पर न आने देता। वह उससे यह न कह पाता कि बेटा में तुम्हारा बाप हूँ। तुम्हारी हर धड़कन, हर सोच से वाकिफ हूं। वह जानता है कि वह जो कुछ भी कहता, उससे श्याम का दिल दुखता। एक सहृदय पिता ऐसा कर भी तो नहीं सकता।

श्याम भी पिता से की गई अपनी गलतबयानी से उकता गया था। कुछ दिन तो उसने वैसे ही काम किया। फिर पैसे जुटाकर उसने बाटी–चोखा की दुकान खोल ली। शुरूआत में तो उसे परेशानी हुई लेकिन कालांतर में उसकी दुकान चल निकली। इसके बाद उसने अन्य जगहों पर दुकानें लगानी शरू कर दी। देश भर में उसके 100 से अधिक संस्थान हैं। जो श्याम खुद नौकर था, उसने एक हजार लोगों को रोजगार दिया। वह अब एक खुशहाल जिंदगी का मालिक है। वह अपनी खुशी में अपने पिता को शामिल करना चाहता था लेकिन एक सरप्राइजेशन के साथ। जब वह लखनऊ पहुंचा तो उसे पिता की ओर से भी एक सरप्राइज मिला। उसे सरकार की ओर से लाखों रुपए का श्रमरत्न पुरस्कार मिला था। उस पुरस्कार को वह बेतहाशा चूमे जा रहा और जब श्याम ने उसे अपनी उपलब्धि बताई तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। खुशियों के इस अतिरेक को वह पचा न पाया। उसका मुंह जो खुला तो खुला ही रह गया। कदाचित् मुख मार्ग से ही उसके प्राण पखेरू उड़ गए। बेटे के छूते ही उनका शरीर लुढ़क गया। श्याम को काटो तो खून नहीं।

पिता के क्रिया कर्म के बाद वह लुधियाना लौट आया। अपनी मां के साथ। पिता को तो सुख नहीं दे पाया लेकिन मां की खुशी ही अब उसके जीने का मकसद है। वह अपने व्यापार को खूब बढ़ा रहा है। उसने हर आउटलेट में अपने पिता सरयू की तस्वीर टांग रखी है। उस पर अगरबत्ती लगाते अक्सर बड़बड़ाता है–पिता जी! कुछ दिन और रुक जाते तो क्या बिगड़ जाता आपका? और सजल हो उठते हैं उसके नयन।

उसे याद आता है कि कैसे उसके पिता उसे अपने कंधे पर लेकर दौड़ लगाया करते थे। उसे उछालकर आनंदित होते थे। रिक्शे पर उसे बिठाकर शहर का कोई न कोई हिस्सा घूम आते। साथ बैठी मां कहती कि अब बस भी करो, तक जाओगे लेकिन सरयू हंस कर टाल देते। अच्छे दिन आने पर श्याम चाहता था कि वह अपने पिता को महंगी कार में घुमाए लेकिन वे तो बेटे की एक तरक्की से ही इतने खुश हुए कि देह छोड़ दी। अब अपनी अन्य तरक्कियों को वह साझा भी करे तो किससे? पिता की छांव से वह वंचित हो गया है लेकिन मां को वह अपने पिता के हिस्से की भी खुशियां दे देना चाहता है। पुत्र धर्म का तकाज़ा भी तो आखिर यही है।

गुज़रे हुए वक्त को लौटाया तो नहीं जा सकता लेकिन जो वर्तमान है, उसे संवारा तो जा ही सकता है। शहर–शहर श्याम के आउटलेट्स खुल रहे हैं लेकिन पिता को सुख न देने के अतृप्त भाव का दायरा भी उसी तेजी के साथ बढ़ता जा रहा है। ■

पता : आर.एच. ए–2 लौलाई, मल्हौर,
लखनऊ, उत्तर प्रदेश
मो. : 7459998968

घर

शशि श्रीवास्तव

इलाहाबाद नगर निगम आपका स्वागत करता है। शहर के प्रवेश द्वार पर लगा बोर्ड देखते ही लड़कियाँ जो अब तक शांत थीं, चहकने लगी थीं।

"मैम, संगम चलेंगी ? आनंद भवन दिखाएंगी ?" और........वे सवालों के बौछार करने लगी थीं उस पर। वह अन्मयस्क मनःस्थिति में पाँच साल में ही बेतरतीब बढ़ गए शहर को देख रही थी। उसने गर्दन मोड़ कर उसके ठीक पीछे बैठी मिस माथुर की ओर देखा था। यह इशारा था उसका कि वे उसकी सीनियर हैं और इस टूर की संयोजक भी। लड़कियों को उनसे पूछना चाहिए।

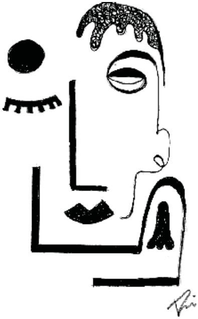

लड़कियां जैसे ही उनसे मुख़ातिब हुईं वह फिर खिड़की से बाहर देखने लगीं। जिस सड़क के दोनों ओर लगे पेड़ों ने हरियाली का चंदोवा—सा तान रखा था वे सारे पेड़ गंजे की खोपड़ी में तब्दील हो गए थे और सड़क भारी हल्के वाहनों की आवाजाही के बाद भी किसी सद्यः विधवा की सूनी मांग सी लग रही थी।

''आप अपने घर नहीं जाएंगीं मैम ?'' एक लड़की ने उसकी दुखती रग छेड़ दी थी। इस सवाल का वह क्या जवाब दे, सोच ही रही थी कि मिस माथुर बोल पड़ी, ''हां काया! तुम्हें जहां उतरना हो उतर जाना जाते वक्त बुला लेंगे।''

''अरे नहीं घर में कोई है ही नहीं। मम्मी नानी के यहां गई हैं। पापा को बता दिया है, वह मिल लेंगे आकर।'' उसने जल्दी से स्थिति स्पष्ट कर दी।

काश उसके पैदा होते ही मां की बीमारी से वह भी संक्रमित हो जाती। दादी उसे बकरी का दूध पिला कर ना पालतीं, मरने देतीं। ना वह होती ना उसे घर की तलाश होती। घर जहां जिंदगी सांस लेती है। हंसती है। मुस्कुराती है। ऐसे घर की आरज़ू सबको होती है। पर मिलता किसी—किसी को है। उसे तो नहीं मिला। उसके घर में हर उस चीज का टोंटा था जो जीने की जरूरी शर्तें पूरी करती हों। यानी हंसी खुशी, चैनोंसुकून। जो जाने कब बनवास ले गए घर से। घर यातना शिविर में तब्दील हो गया। खासकर रिश्तेदारी या मोहल्ले पड़ोस में लड़के की पैदाइश का समाचार घर की सांसों का दम घोंट देता। घर की हवा भारी हो जाती।

कभी–कभी तो मां के कंठ से फूटा करुण क्रंदन किसी आत्मीय की अकाल मौत का सा आभास देने लगता। काया को अपना साथ बोझ लगने लगता। खुद पर शर्म आने लगती। वह दादी के पीछे छुपने की कोशिश करने लगती कि मां की नजर ना पड़े उस पर। कि वही तो थी, जो मां के सारे टोने टोटके, तंत्रों मंत्रों को धता बताती पैदा हो गई थी। भगवान भी बड़ा अजीब है उसे लड़का बना देते तो उनकी इतनी बड़ी दुनिया में कौन सी कयामत आ जाती। मम्मी खुश रहतीं तो आप सब भी खुश रह लेते। उसके मन की बात दादी के सामने फूट ही पड़ती उसकी जिह्वा से। दादी खींचकर उसे अपने सीने से लगा लेतीं। कहतीं, ''भगवान से शिकायत नहीं करते, वे सब सोच समझकर करते हैं और हर इंसान को किसी खास मकसद के लिए ही भेजते हैं। बच्चा ! खुद पर शर्म नहीं गर्व करना सीख। प्यार करना सीख खुद से भी, दूसरों से भी।''

''मेरी मां जब मुझसे प्यार नहीं करती..मैं सुंदर नहीं हूं इसलिए कोई मुझे..! दादी आपने क्यों पाला मुझे.. मरने क्यों..!''

''हट ..ऐसी बातें नहीं करते।'' दादी उसे चट सीने से लगा लेतीं। ''तुझे कौन नहीं चाहता..तेरा पापा और मैं हम तुझे..!''

''आप लोग तो..!'' काया भरी–भरी आंखों से दादी के सीने में अपना मुंह और गड़ा लेती।

''तेरी मां जब तुझे अपनी मौसेरी बहन को गोद देना चाहती थी तब मैंने और तेरे पापा ने मना कर दिया तुझे प्यार करते थे तभी ना..!'' दादी ने एक नया खुलासा किया था उस दिन। वह और मायूस हो गई थी। वह मायूसी आज भी उसके साथ है। चाहने पर भी खुद को उससे अलग नहीं कर पाती। 25 साल पलक झपकते कब गुजर गए पता तक नहीं चला। इधर काया ने पढ़ाई पूरी करते ही पी.जी.टी. माध्यमिक शिक्षा परिषद की परीक्षा पास की। नियुक्ति का इंतजार था उसे। इधर मात्र 2 घंटे की... बीमारी के बाद दादी ने आंखें मूँद लीं। काश आज दादी जिंदा होती! उसकी कामयाबी पर कितना खुश होतीं। उसकी जिंदगी का रंग ही कुछ और होता। बेटा कोई यहां हमेशा रहने नहीं आता तेरी दादी ने ना खुद कष्ट भोगा ना किसी को दिया। चलते फिरते चली गई यह तो सोच। पापा की बातें याद कर खुद को दिलासा दे लेती है। जब पापा दादी की अंतिम विदाई की बात करते तब रह–रह कर उसके जेहन में अपनी तीनों बड़ी बहनों की विदाई का वक्त कौंध जाता। कई बार जी में आया कि पापा को याद दिलाए कि हमने तीनों दीदियों की विदाई भी ठीक उसी तरह नहीं की! पर ऐसी यादें जो पापा को फिर से बेबसी, पछतावे व अवसाद की आग में झोंक दे, उनका विस्मृति की आग में दबे रहना ही अच्छा। पर उसे जब तब बहुत याद आती है उन मौकों की जो घर में आए तो जरूर पर पुत्रवती ना कहला पाने के गौरव से वंचित मां ने फिर घर में आये तीनों दीदी की शादियों के हर मौकों की अगवानी आंसूओं से ही की। आंसू बेटी के बिछोह के होते तब तो कोई बात ही नहीं थी पर मां का दुःख दूसरा था। वह शादी में पापा के खुलकर खर्च करने पर इतनी व्याकुल हो जातीं कि उनकी जिह्वा से अनर्गल, असंगत शब्दों का निर्झर बह निकलता। उनके ऐसे ही बर्ताव के चलते एक बार विदा हुई माया दी दोबारा मायके का मुंह तक ना देख सकीं या देखना नहीं चाहा उन्होंने, कौन जाने।

''आए गै लुटेरन की फौज लेकर।'' बेवक्त, बेमौके बोले गए मां के अनर्गल शब्द पिघले सीसे से आंगन में खड़े दीदी के ससुर के कानों में उतर गए। वे अगिया बेताल हो गए। ''आप लोग रिश्ता लेकर खुद गए थे हमारे घर, हम नहीं आए थे आपके घर। आपके यहां घर आए मेहमानों का स्वागत ऐसी असभ्य अभद्र भाषा से किया जाता होगा हमारे घर की रीति नहीं है यह। पंडित जी जल्दी करो फेरे–वेरे निपट जाए तो इज्जत जो बची है, लेकर अपने घर जाएं लड़की को भेजना हो तो भेजें वरना....इनकी मर्जी..! हम तो जिस कारण के लिए आए हैं वह हो जाए, बस्स, फिर यह जाने इनका काम।'' फिर पापा सहित घर के सारे लोग उनके हाथ पांव जोड़ते रहे पर वह ऐसे घर में अपने पानी तक ना पीने के फैसले से जरा भी नहीं डिगे।

बाकी दो शादियों में मां ने लड़के वालों को तो बक्स दिया पर इस बार उनके भीतर की कुंठा व आक्रोश का निशाना काया व छाया बनीं।

''अबे तो दो निबटी हैं, दो ठो पत्थर तो अबै धरे हैं छाती पर।'' बधाई देने वालों से कहे उनके बोल सुन–सुन कर समारोह की सारी उमंग, उत्साह व खुशी तिरोहित हो गई उन दोनों की। बस भरे मन से अपने अपने काम में लगी रहें।

घर के नाम पर ऐसी ही कड़वी कसैली यादों का जखीरा है, उसके पास जब भी आती हैं आंखें नम और मन भारी कर जाती हैं।

"उतरेंगी नहीं मैम ?" एक लड़की ने बस रुकने पर

उसे टोका, तब उसकी तंद्रा भंग हुई थी। बस से उतरते ही पापा सामने दिखाई पड़ गए पहले से भरा–भरा मन यादों के सफर के एक अहम सह यात्री को देख खुद को रोक नहीं पाया था। पापा के गले लग कर फूट पड़ी थी वो। पापा ने कुछ क्षण उसे रो लेने दिया था, फिर प्यार से सर सहलाते हुए बोले, ''धत्त पगली, इतनी बड़ी और जिम्मेदार हो गई फिर भी बच्चों सी..!'' पापा के आत्मीय स्पर्श ने जादू किया था जैसे उसका रोना रुक गया था पापा ने एक पैकेट निकाल कर पकड़ाया था बोले, ''हरी के समोसे लाया हूँ। तुझे बहुत पसंद है ना।''

''पापा आप आज बदले–बदले से लग रहे हैं, मज़ेदार से।''

''क्या जोकर लग रहा हूं ?'' पापा हंसे मुक्त हंसी। वो अपलक आश्चर्य से आंखें फाड़े पापा को देखती रह गई थी। इससे पहले पापा को इतना तनावमुक्त व निश्चिंत देखा नहीं था उसने। मां का जो भी हो, उनके चेहरे पर माहौल के प्रति तटस्थ, वीतरागी वाला भाव ही दिखाई पड़ा उसे।

''मैं भी हंसा करता था कभी पर यह पनौती जब से घर में आई, हंसना मुस्कुराना यहां तक की जीना ही भूल गया।''

''ऐसा क्या हुआ पापा हमारे साथ !'' अनजाने ही उसके मुंह से निकल गया था ।

''इसकी कोई बहुत बड़ी वजह नहीं थी, अगर तेरी मां में रिश्तों के प्रति भरोसा, विश्वास, प्यार, स्नेह व सामंजस्य बनाने की जरा भी समझ विकसित हो गई होती तो सब कुछ ठीक हो जाता देर सवेर, शुरू–शुरू में मैं और तेरी दादी इसी भुलावे में रहे कि रहते–रहते तेरी मां को इस घर की रीत–नीत, रहन–सहन की आदत हो जाएगी। तब वक्त के साथ उसके ताने, शिकायतें खत्म हो जाएंगी पर नहीं, जैसे–जैसे वक्त बीतता गया और उसकी एक लड़के की हठ भरी चाहत के चलते एक के बाद एक चार लड़कियां पैदा हो गई। उसका पुत्र मोह पागलपन की शक्ल लेने लगा। कहां चार साल की उम्र में पिता को खोकर वक्त से पहले ही समझदार हो गया मैं। वहीं तहसीलदार पिता और सप्लाई विभाग में इंस्पेक्टर भाई की इकलौती लाडली तेरी मां, जिसने ना कभी पैसों की तंगी देखी ना कद्र ही की। जबकि हमारे घर में पिता की पेंशन के सहारे घर गृहस्थी व मेरी पढ़ाई का खर्च चलाती मेरी मां एक–एक रुपए की कतर–ब्योंत में लगी रहती। मैं गवाह था मां की एक–एक पैसों को हिसाब से खर्च करते देखने का। हालांकि जब मेरी नौकरी लग गई तब स्थिति बदल गई। मेरी तनख्वाह और मां की पेंशन मिलाकर 4–5 प्राणियों वाले घर का खर्च आराम से चल जाता था तब। पर अगर संभाल कर ना खर्च किया जाए और सारा पैसा एक दिन में खर्च कर लो और फिर कहने लगो, इत्ती कमाई तो मेरे पिता या भाई एक दिन में ही कमा लेते हैं। इस कुतर्क का कोई इलाज है बेटा! तेरी मां यही करती रही उम्र भर।

तेरी दादी निपट निरक्षर थी। पर उसने कभी मेरी पढ़ाई में पैसे की कमी आड़े नहीं आने दी। तुम चारों की पढ़ाई के खर्चों पर भी तेरी ग्रेजुएट मां का तंगी का रोना शुरू हो जाता। वह सब संभाल लेतीं। तुझे तो मां का मुखापेक्षी होना ही नहीं पड़ा। पता नहीं क्या और कैसी पढ़ाई की और कैसी सोच है कि जब तुम चारों की पढ़ाई लिखाई पर जोर दिया जाता तो वह अपना घिसा पिटा रिकॉर्ड बजाने लगती ।

''अरे ज्यादा पढ़ जाएंगी तो आसानी से लड़के नहीं मिलेंगे ज्यादा पढ़े लिखे लड़कों के भाव भी तो अच्छे होते हैं और कम पढ़े लिखे को यह लोग राजी नहीं होगीं। मेरी बात अभी समझ में नहीं आ रही जब लड़के ढूंढने निकलोगे तब पता चलेगा।'' बड़ी तीनों मां से ज्यादा चिपकी रहीं। पढ़ने को पढ़ गई जैसे–तैसे, पर सिर्फ डिग्रियां भर हासिल कर लेने में और पढ़ाई को जीवन का प्रमुख लक्ष्य बनाने में बहुत फर्क होता है। आज मुझे तुझ पर गर्व है बेटा, बहुत ज्यादा गर्व है। इस बात का संतोष तो है मुझे कि पूरा जीवन बेकार नहीं गया। तेरे रूप में बहुत कुछ हासिल हो गया है। इसलिए तो आज खुलकर हंस रहा हूं। हमारे घर में वैसे भी खुशी के मौकों का अकाल रहा। आज मिला है तो हंस लूँ फिर कौन जाने..!'' पापा फिर संजीदा हो गए।

''एक नई खबर तो दी ही नहीं तुझे।''

''क्या बताइए ना जल्दी।'' उसकी उत्सुकता चरम पर थी।

''तेरी मां ने एक बेटे की मां कहलाने की अपनी हसरत पूरी कर ली है।''

''क्या कहा...यह कब हुआ..मेरा भाई..!'' वह लगभग चीख पड़ी।

''ऐसा कुछ नहीं हुआ..तू समझ..!'' पापा ने जल्दी से बात साफ की।

''फिर..फिर कैसे..!''

''वह ऐसे कि उसकी कजिन है ना वह पम्मी..उसके दो बेटे थे ना..उसे एक बेटी की चाहत थी पर बेटा हो गया.. उससे शायद तेरी मां ने पहले से बात कर ली थी..अब उसका सारा गुस्सा चला गया है..उसने अपनी सारी चाहत..सारा प्यार..उसके नाम लिख दिया है..अब मैंने वह घर बेचने का फैसला कर लिया।''

''क्या..!'' काया को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ था जैसे, फिर भी जो पापा ने कहा उस पर यकीन करने के सिवा और कोई रास्ता नहीं था।

''हां..अब तुम लोगों को तो वहां रहना नहीं..फिर इतने बड़े घर की जरूरत तो है नहीं..दो कमरों का एक छोटा सा घर ले लिया जाएगा और बचे पैसों से छः हिस्से लगाकर बराबर–बराबर बांट दिए जाएंगे।'' घर का बिकना जाने क्यों अच्छा नहीं लगा था उसे। उस घर से दादी की यादें जुड़ी थीं। उनके कमरे में जाकर लेट गई थी। लगता था जैसे दादी कहीं आस–पास ही हैं। उसकी आंख भर आई। दादी और उनके कमरे में उसका समूचा ब्रह्मांड समाया था जैसे।

पापा की भरी–भरी आंखें अनंत अछोर क्षितिज में ना जाने क्या तलाश रही थीं। काया ने भी अपनी दृष्टि वहीं गड़ा दी। कौन जाने दादी दिखाई पड़ रही हों पापा को। देर तक बाप–बेटी इस अप्रत्याशित स्थिति का गरल पान करते रहे फिर पापा ने एक सर्द सांस लेकर छोड़ते हुए बेटी की ओर देखा था। कुछ देर शब्दों का चयन करते रहे जैसे। फिर बोलें, ''क्या करूं बेटा, बाकी तीनों का तो पता नहीं पर तुझे बहुत बुरा लगेगा जानता था पर मेरे सामने अब और कोई रास्ता नहीं, मेरा दिल इतना बड़ा नहीं कि मैं अपने चौगड्डे का हिस्सा किसी और को दे दूँ। तेरी मां अगर यह बच्चा गोद ना लेती तो मैं अपने जीते जी यह घर कभी ना बेचता। मेरे बाद चौगड्डा इस घर का जो चाहे करता मुझे क्या। कल को वह बड़ा होकर कैसा निकले कौन जाने या तेरी मां चाहे अनचाहे पुत्र प्रेम में पूरा का पूरा उसी को..पर मुझे ये मंजूर नहीं इसीलिए मैंने।'' पापा ने स्थिति स्पष्ट की थी।

"ठीक किया पापा आप अपने चौगड्डे के लिए आज भी कितने पजेसिव हैं!" काया ने मुस्कुराते हुए पापा की ओर देखा फिर बोली,

"आपको चौगड्डे के लिए यही पजेसिवनेस से तो माँ ज्यादा चिढ़ती थी। पता है पापा, आज रास्ते में चौगड्डा नामक स्थान पड़ा, मुझे आपकी याद आ गई, आप घर में घुसते ही किसी एक का नाम न लेकर चौगड्डा कहकर पुकारते थे।"

''हाँ बेटा सब याद है...पर तेरी माँ को कुछ भी याद नहीं...तेरी मां हमेशा रिश्तों के ऊपर पैसों व व्यक्तित्व को वरीयता देती रही व मेरी साधारण शक्ल और वैसी ही मामूली आमदनी के लिए कभी मुझे माफ नहीं किया। कंगलों में झोंक दिया क्या कोई ओढ़े और क्या बिछाए। जैसे ज़हर बुझे वाक्यों ने मेरे भीतर उसके लिए प्यार, लगाव व सम्मान जैसी भावनाएं पनपने ही नहीं दीं। तेरी मां को इन मानवीय गुणों की ना कदर थी, ना रुचि थी और ना ही जरूरत। जिस चीज की कमी का उम्र भर रोना रोती रही, वही आज उसे दे कर हरिद्वार चला जाऊंगा, वहीं किसी आश्रम में रहकर प्रकृति के सान्निध्य और यायावरी में बाकी का जीवन काट दूंगा।"

"अरे यह क्या बात हुई पापा ? मेरी जरा भी चिंता नहीं आपको ! मुझे अकेला छोड़ देंगे ?" काया कातर हो आई थी।

"अरे तू अकेली कहां ? तेरे अंकल आंटी है ना तेरे साथ? अभिभावक जैसे मकान मालिक कहां मिलते हैं। फिर यायावरी के बीच जब भी कानपुर से निकलूँगा, तेरे साथ कुछ दिन रहकर जाऊंगा। अभी तो तेरे अंकल आंटी से भी नहीं मिला।"

"तो आज ही शुरू कर दीजिए ना यायावरी ? पहले हमारे साथ सारनाथ चलिए फिर वहां से कानपुर अंकल आंटी से भी मिल लीजिएगा।"

''आऊंगा जल्दी ही, तू कानपुर पहुंच पीछे से तेरा और तेरी दादी का जरूरी सामान लेकर आऊंगा। अपने घर में रख लेना। वैसे भी उस घर से मिला ही क्या..! तू आज जो कुछ भी है सब अपनी मेहनत की बदौलत है। हां, एक बात और तूने हमें तो मना कर रखा है, अपने लिए लड़का देखने को। पर अब तू खुद देखना अपने लिए। किसी भी जाति का हो मुझे कोई एतराज नहीं। बस तू अपना घर बसा ले।"

''वैसा ही जैसा आपका बसा..नहीं पापा अब ऐसी कोई इच्छा नहीं..पापा अब मैं आपकी प्रतिलिपि जरूर हूँ, पर जीवन में किसी को अपने साथ इसलिए नहीं जोडूंगी कि वो मेरी सुरक्षा करे, अकेलापन बाँटे, पापा आपने तो देखा है, भोगा भी है... जीवनसाथी हमेशा साथी ही नहीं होता ..कभी–कभी बोझ भी बन जाता है..पहले घर बसाओ फिर उसका मलबा ढोते रहो उम्र भर.. इससे तो मैं बेघर ही भली ।" ■

पता : 6/80, पुराना कानपुर

मो. :9453576414

पलकों के पीछे

मीनाधर पाठक

अभी मार्च के शुरुवाती दिन हैं पर सूरज ने अपनी आँखें ऐसे चढ़ा रखी हैं जैसे मई–जून के तपते दिन हों। बढ़ती उम्र और मौसम के बदलते मिजाज के कारण मधु को कभी–कभी अनिद्रा की शिकायत हो जाती है। जिसके कारण पूरी रात छत पर तारे गिनते, चाँद से बतियाते और आकाश मार्ग से अपनी यात्रा पर निकले पक्षियों की कतारों को देखते हुए निकल जाती है। शायद वे सूर्य के ताप से बचने के लिए ही रात्रि के समय अपनी यात्रा पर निकलते हैं और अगले दिन धूप चढ़ते ही किसी बगीचे में उतर कर पत्तों के झुरमुट में छुप जाते हैं।

कल भी ऐसी ही रात थी। उलझन और बेचैनी के कारण मधु की आँखों से नींद कोसों दूर थी। छत पर चहलकदमी करते हुए देर रात जो थक कर वह बिस्तर पर लेटी, तो सुबह धूप चढ़ने पर उठी। मुकुल ऑफिस चले गए थे। स्नान–ध्यान, योग, करते हुए मधु को बहुत देर हो गयी थी। पूजा घर से निकलते ही उसे किचन से अदरक कूटने की आवाज सुनाई दी। वह समझ गयी कि अनन्या उसके लिए चाय बना रही है। प्यास से उसका गला सूखा जा रहा था। बैठक में आते ही मधु ने मेज पर रखे जग से पानी ले कर पी लिया। पीते ही उसका रोम–रोम हरिया उठा। यूँ ही नहीं जल को जीवन कहा गया है! एक लोटा जल से देवता हों या पितर! सभी जुड़ाते हैं। मेज पर रखा रिमोट उठा कर अभी न्यूज चौनल लगाया ही था कि तभी उसे कुछ याद आया। वह जग उठा कर सीढ़ियों की ओर भागी।

"मम्मी जी! चाय ला रही हूँ। पी कर जाइये।" बहू अनन्या की आवाज सुन कर भी मधु नहीं रुकी।

नदुली में पानी भरा और बड़े गमले के पीछे रखे डिब्बे से दाने निकाल कर बिखेर दिये। देखते ही देखते ढेरों परिंदे छत पर उतर आए और एक दूसरे को धकियाते हुए दानों पर टूट पड़े। कुछ देर बाद ही वे सब नदुली पर बैठ कर अपनी नन्हीं–नन्हीं चोंचों से बूँद–बूँद कर पानी का घूँट भरने लगे। कुछ परिंदे अठखेलियाँ करते हुए उसमें डुबकियाँ लगाने लगे। कुछ फुदकते हुए गमलों पर जा बैठे तो कुछ ने पौधों की ओट ले ली। उनके कलरव का संगीत हवा में घुल रहा था जिसे सुन

कर उसका मन हमेशा की तरह आज भी पुलक उठा था। वह उनका खेल देख ही रही थी कि तभी नीचे से अनन्या की पुकार आ गयी।

''मम्मी जी...! आपकी चाय ठण्डी हो रही है।''

उन सब को फुदकता—चहकता छोड़ कर वह नीचे उतर आयी और सोफे पर बैठ कर टीवी पर चल रही खबरें देखते हुए चाय की चुस्की लेने लगी। जलस्तर में तेजी से आती गिरावट के बारे में चर्चा हो रही थी।

"गर्मी आयी नहीं कि पानी की समस्या शुरू।" टीवी के स्क्रीन से नजरें हटा कर प्याली मेज पर रखते हुए मधु बोली। तभी उसकी नजर आँगन में रखी वाशिंग मशीन में कपड़े डालती अनन्या पर पड़ी। ये मशीन उसे तनिक नहीं सुहाती थी। स्विच ऑन हुआ नहीं की ऊपर टंकी खाली! कितनी बार वह कह चुकी थी कि इस क्षति की कोई भरपाई नहीं है। पर उसकी सुनता कौन है! आज भी उससे रहा न गया। अनन्या को वॉशिंग मशीन कम चलाने की बिन मांगी सीख देने लगी।

''क्या मम्मी जी! मैं थक गयी हूँ आप का उपदेश सुनते—सुनते। अब तो चादरें और पर्दे धोने के लिए ही मशीन लगाती हूँ। बाकी के कपड़े तो हाथ से ही धोती हूँ फिर भी आप चार बातें सुना ही देती हैं।'' नल की टोंटी खोल कर टाइम सेट करती हुयी अनन्या की भृकुटी तन गयी थी।

''तो ठीक है न! उसी बहाने तेरे शरीर की कसरत हो जाती है। नहीं तो अपने को साँचे में फिट रखने के लिए तू क्या—क्या नहीं करती है! खाना तक तो भर पेट खाती नहीं।'' खिसियानी हँसी—हँसती हुयी मधु बोली।

''आप अपना ख्याल रखिए मम्मी जी! मेरी चिंता छोड़ दीजिये।" अनन्या के जवाब से आहत हुयी थी मधु।

''देख अनन्या! मेरी बातें तुझे बहुत बुरी लगती हैं पर हमारे समय में कुएँ, ताल, नहर, नदियाँ सब पानी से लबालब भरे रहते थे और तेरा समय आते—आते नदियाँ सिमट गईं। कुएँ सूख गए। पानी बोतलों में बिकने लगा। अब सोच जरा कि यही हाल रहा तो तेरे बच्चों के समय में पानी कितना बचेगा!'' उसे सुनाती हुयी जोर से बोली मधु।

''अपने समय से बाहर निकलिए मम्मी जी! ये आप का समय नहीं है। मैं पूरा प्रयास करती हूँ कि व्यर्थ पानी न गिरे पर थूक से आटा तो नहीं सान सकती न!'' कहते हुए अनन्या सब्जियों का छिलका छत पर रखे डस्टबिन में डालने चली गयी। जिसका प्रयोग मधु पौधों के लिए किया करती थी।

''सुबह 'बीपी' वाली दवा ली थी आपने?'' लौटते हुए रुक कर पूछा अनन्या ने तो मधु उसका मुँह देखने लगी। वह दवा लेना भूल गयी थी।

''आपको दुनिया भर की चिंता रहती है, सिवाय अपने!''

मधु समझ गयी कि अनन्या रुष्ट हो गयी है। हमेशा यही तो होता है। वाशिंग मशीन लगते ही पानी के लिए बतकही फिर रूसा—रूसी। शायद उसी की गलती है। यूँ बार—बार टोकना ठीक नहीं लेकिन वह भी क्या करे! पानी गिरते देख कर उसका मन अधीर हो उठाता है। सच ही तो कहा अनन्या ने कि ये उसका समय नहीं है। अब तो जहाँ देखो वहाँ मशीनें ही काम करती हैं। सोचते हुए उसने टीवी पर नज़र गड़ा दी। तभी फोन बज उठा। स्क्रीन पर निहारिका का नम्बर फ्लैश हो रहा था।

"हेल्लो...याद है न! ग्यारह बजे ऑनलाइन आ जाना।" फोन उठाते ही उधर से निहारिका की आवाज आयी।

"ओह! मैं तो सच में भूल गयी थी।"

"इसी लिए फोन किया है।" हँसते हुए कहा निहारिका ने और फोन कट गया।

कोविड के चलते ऑनलाइन गोष्ठियों का जो दौर शुरू हुआ तो अब तक जारी था। जल्दी से उठ कर मधु अपने कमरे में आ गयी। गिनती की सीढ़ियाँ थीं पर इतने में ही उसकी साँसें ऊपर—नीचे होने लगी थीं। माथे पर पसीना छलक आया था पर गोष्ठी के नाम से ही उसका मन खिल उठा था। ए.सी. ऑन कर वह ड्रेसिंग टेबल के सामने आ खड़ी हुयी। कंघी की और छोटी—सी गोल बिंदी माथे पर चिपका कर खुद को देखने लगी। उसके अधिकतर केश चाँदी से चमक रहे थे। कोविड के कारण कहीं आना—जाना क्या बंद हुआ औरों की तरह उसके बाल भी अपनी असली रंगत में आ गए थे। आलमारी से दुपट्टा निकाल कर गले में पहना। फोन को स्टैंड पर सेट किया और बैठ गयी।

समय से गोष्ठी आरम्भ हुयी और वरिष्ठ कथाकार मिलिंद जी को कहानी पाठ के लिए आमंत्रित किया गया। साठ के दशक की प्रेम कहानी सुनते हुए उसकी पलकें भीग उठी थीं। लगभग बीस मिनट बाद कहानी समाप्त हुयी। कहानी के लिए उन्हें ढेरों बधाइयाँ मिलीं। स्क्रीन पर उनकी आँखों की नमी साफ झलक रही थी। न जाने ये नमी एक अच्छी रचना पर मिली प्रशंसा की थी या कहानी से उपजी

टीस की! चर्चा और अगली कहनी के लिए नाम घोषणा के साथ ही गोष्ठी समाप्त हुयी।

महामारी ने पाँव जरूर सिकोड़ लिए थे, पर बिना आवश्यकता बाहर निकलने और सबसे मिलने–जुलने की मनाही अब भी थी। ऐसे में इन साहित्यिक गोष्ठियों से मधु को ऊर्जा मिल जाती थी।

वह नीचे आ कर सोफे पर बैठी ही थी कि अचानक वही पुराना दर्द कंधे पर महसूस हुआ। उसका अड़हुल–सा खिला चेहरा पल भर में ही मुरझा गया। अनन्या को पुकारते हुए मधु ने जल्दी से बालों से क्लचर और नाक से चश्मा हटा दिया। रहा न गया तो सोफे से उठी और दीवान पर भहरा गयी। तब तक अनन्या भी आ गयी थी। दर्द असहनीय होता जा रहा था। बायाँ हाथ, कंधा, गर्दन के पीछे का हिस्सा, सिर का पिछला भाग और हथेली सहित पूरी बाँह! साँस लेना दूभर हो रहा था। अनन्या लगातार उसकी हथेली सहला रही थी, पर दर्द था कि हनुमान की पूँछ की तरह बढ़ता ही जा रहा था। कलाई के बीचोबीच नाड़ी में जैसे दर्द का सागर हिलोरें ले रहा था। जिसकी लहरों के उफान से उसका दिल बैठा जा रहा था। लगा कि अब प्राण नहीं बचेंगें तब किसी तरह आँखें मूँदे हुए ही मधु डूबती आवाज में बोल पड़ी।

''अनन्या...!''

''अभी आप ठीक हो जाएँगी मम्मी जी!'' सास की हथेली रगड़ती हुई अनन्या लरज कर बोल उठी।

वह परिचित थी अपनी सास की इस पीड़ा से। कितनी बार कह भी चुकी थी कि जा कर डॉक्टर को दिखा लीजिये, पर वह नहीं गयी थी। हर बार पेनकिलर से काम चला लेती थीं लेकिन आज तो वह भी नहीं था घर में।

''सुन बेटा...!''

''प्लीज चुप रहिए मम्मी जी! कुछ मत बोलिए।'' अपनी गदेली उसके होठों पर रख दी अनन्या ने।

मधु अनन्या से बहुत कुछ कहना चाहती थी, पर जैसे बोलने की क्षमता ही न बची थी। फिर लगा कि अभी न बोल पाई तो शायद अब जिंदगी उसे मौका ही न दे। क्या पता कि अगली साँस आए न आए...! कुछ देर बाद ही कराहती हुई उसका हाथ अपने मुँह से हटा कर मधु फिर से बोल पड़ी, ''देख बेटा...! कभी गुस्से में कुछ बोल दिया हो तो...!" कहते–कहते निढाल हो गयी थी। दाँत भींच लिया उसने। आँखें मूँदे सोच रही थी कि एक बार पलकें उठा कर बहू का चेहरा देख ले। एक वही तो है इस घर में जो उसका ख्याल रखती है। उसे समझती है। भले ही कभी–कभी नाराज हो जाती है। पर उसकी सारी शक्ति क्षीण हो गई थी। पलकें नहीं उठीं, पर अनन्या की घबराई आवाज उसे सुनाई दे रही थी।

"ऐसा मत बोलिए मम्मी जी! आपके बिना मैं इस घर की कल्पना भी नहीं कर सकती!" कह कर शायद वह कमरे के बाहर निकल गयी थी और फोन पर अपने ससुर को जल्दी आने के लिए कह रही थी।

दर्द अपने चरम पर था। होंठ और गला दोनों सूख कर पपड़ा गए थे। तभी अनन्या ने उसके सिर के नीचे हाथ लगा कर थोड़ा सा उठाया और होंठों से पानी का गिलास लगा दिया। मधु ने चुपचाप दो घूँट पानी पी लिया। अनन्या ने फिर से उसे लिटा दिया। मधु के चेहरे पर कुछ शान्ति–सी दिखने लगी थी।

अब दर्द भी अपने चरम से तिल–तिल कर नीचे उतर रहा था। कई बार सुना था उसने कि अपनी साँसों पर ध्यान दो, तो बाकी हर तरफ से ध्यान हट जाता है। कष्ट से भी। मधु ने अपनी साँसों के आरोह–अवरोह पर ध्यान केन्द्रित कर दिया। आज पहली बार वह अपनी साँसों को इतने करीब से महसूस कर रही थी। लगा, यही तो हैं जो इतनी बड़ी देह को संचालित करती हैं। ये टूट गयीं तो देह एक मुठ्ठी राख और धुआँ के सिवा कुछ भी तो नहीं। वह शिथिल पड़ी थी। पलकों के पीछे घना अंधकार पसरा था और उसी अंधकार में स्मृतिपटल पर अतीत की अनेकानेक आकृतियाँ चलचित्र–सी चल पड़ी थीं।

अब दर्द भी अपने चरम से तिल–तिल कर नीचे उतर रहा था। कई बार सुना था उसने कि अपनी साँसों पर ध्यान दो, तो बाकी हर तरफ से ध्यान हट जाता है। कष्ट से भी। मधु ने अपनी साँसों के आरोह–अवरोह पर ध्यान केन्द्रित कर दिया। आज पहली बार वह अपनी साँसों को इतने करीब से महसूस कर रही थी। लगा, यही तो हैं जो इतनी बड़ी देह को संचालित करती हैं। ये टूट गयीं तो देह एक मुठ्ठी राख और धुआँ के सिवा कुछ भी तो नहीं।

गाँव का वह बड़ा–सा घर, लदा–फदा बेर का पेड़, उस पर फुदकतीं–चहकतीं गौरैयाँ, ढेले मार कर बेरी तोड़ता घुँघराले बालों वाला वह लड़का, बारिश में भरे ताल से नाल

सहित पुरइन खींच कर माला बनाते बच्चे, हरे–भरे लहलहाते खेत, बैलगाड़ी पर बैठी गीत गाती मेला जाती स्त्रियाँ, खेल–खिलौने, गुड्डे–गुड़ियों का ब्याह, झूठ की बारात, बिदाई और झूठे आँसू...!

पटल पर दृश्य बदल गया था।

आँखों में ढेर सारे सपने लिए हँसती–खिलखिलाती पीठ पर बस्ता लादे स्कूल जाती लड़कियाँ, वृक्षों के नीचे कक्षा में बैठ कर कबीर, रहीम, मीरा और तुलसी को रटती हुईं फिर कोर्स की किताबों के बीच छुपा कर गुलशन नन्दा, प्रेम वाजपेयी और रानो के उपन्यास पढ़ती हुईं।

दृश्य फिर बदला।

अचानक एक चेहरा उभर आया। घुँघराले बालों वाला वही लड़का, पर उसके होठों के ऊपर अब काली–सी एक मोटी लकीर उग आयी थी और वह स्वयं भी नवविवाहिता–सी बियहुती पियरी में। लड़के को देख कर उसके चेहरे पर मुस्कान खिल उठी।

''तू कब आया?'' पूछ लिया उसने।

''मैं तो कब से यहीं खड़ा हूँ। कहाँ चली गई थी और यह क्या? ब्याह हो गया तेरा! पर तूने तो मुझे वचन दिया था न...!''

''चल झूठे! कब दिया वचन?"

''भूल गई? जब एक दिन गुड्डे–गुड़िया की जगह हम खुद...!" मधु आँखें निकाले उसका मुँह देखे जा रही थी।

"गुड्डा–गुड़िया जिस लड़की के पास था न! वह उस दिन खेलने ही नहीं आई थी। याद आया कुछ...?''

''हाँ, कुछ–कुछ याद आ रहा है। तब तुझे दूल्हा और मुझे दुल्हन बना दिया था सबने मिल कर फिर झूठ–मूठ का ब्याह और झूठ–मूठ के वचन!'' कह कर वह हँस पड़ी थी।

''वह तेरे लिए झूठ–मूठ का था, लेकिन मैंने तो हमेशा उसे ही सच माना और...! पर मुझे क्या पता था कि तू सब भूल गई।'' लड़का उदास, चंद्रमा बिन आकाश जैसे उसका मुख कांति हीन हो गया था। अब मधु को वह घटना याद आ रही थी जब बगिया में वे सब सरली के गुड्डे–गुड़िया का ब्याह रचाने वाले थे।

"सरली तो अयिबे नहीं की। अब खेला कैसे होगा?" छाया बोली थी।

"हाँ, गुड्डा–गुड़िया तो उसी के पास है।" सरोज भी चिंतित लग रही थी।

"ए किशना! भाग के उसके घर जा न!"

"रहे दोय चलो रे सब, आज खेला नाहीं होगा।" फुलवा तुनकी।

"नाहीं, खेला तो जरूरे होगा। ए मधु! चल तू गुड़िया की जगह दुलहिन बन जा अउर किशना, तू दुलहा।" सरोज बोल पड़ी थी।

"हम तो नाहीं बनेंगे दुलहिन, दूसर केहू के बना लो।" मधु ठुनकी।

"काहे?" सरोज आँखें तरेर कर बोली।

"तुम लोग हमरो ब्याह करा दोगी।"

"अरे त कऊन सा सही का ब्याह हो रहा! खेला में सब झूठ–मूठ का होता है।"

"पर किशना कोई गुड्डा थोड़ी न है!"

"अरे ऊ तो माटी का माधो है रे! चल, बन जा दुलहिन।"

उसे दुल्हन बना दिया था सबने मिल कर और किशन को दूल्हा। मंगल गीत होने लगे। द्वार–चार हुआ। मन्त्र पढ़े गए। वचन दिए–लिए गये। दोनों का ब्याह हो गया परंतु बिदाई के समय लड़की की माँ ने ठन–गन कर दिया।

"देखो जी! मैं अपनी बेटी यूँ ब्याह में बिदा नाहीं करुँगी।"

"काहे न बिदा करोगी जी? लोग–बाग का कहेंगे?" पिता बना नरेश बोला।

"आजु जुग–जमाना केतना बदल गया है। जब दुलहा कुछ कमाने–धमाने लगेगा तब गवना होगा लड़की का। समझे कि नाहीं! तब तक वह भी अपना पढ़ाई करेगी।" माँ के जिद्द के आगे किसी की एक न चली। बरात बिना दुल्हन के ही विदा हो गयी और खेल खतम हो गया।

"मेरी दुलहिन बिदा क्यों नहीं की!" किशन छाया के पास जा कर बोल पड़ा।

"ए किशना...! खेला खतम पैसा हजम। समझा न! बड़ा आया दुलहिन बिदा कराने वाला।" छाया जो दुल्हन की माँ बनी थी, किशन को डपट दी।

"अगली बार बिदा करा कर ले आऊँगा। देख लेना।"

किशन ने भी उसे उंगली दिखा कर कहा। सारे बच्चे हँस पड़े। मधु भी। फिर हँसते–खिलखिलाते वे सब अपने–अपने घर चले गए थे।

अचानक मधु के चेहरे की हँसी छिटक कर दूर जा गिरी थी। होंठ थरथरा उठे थे, ''किशन! यह सब क्या कह रहा तू!''

''मैं सच कह रहा हूँ !'' मायूसी से बोला वह।

''पर वो सब तो खेल था किशन! तू तो अक्सर खेल–खेल में दूल्हा...!''

''उस दिन तेरा दूल्हा बनने के बाद मैं किसी का दूल्हा नहीं बना मधु! खेल में भी नहीं। यही बताने आया था...।'' कह कर किशन मुड़ा और उसी घने अंधकार में खो गया। अवाक् हो वह उसकी पीठ देखती रह गयी।

''किशन! सुन तो! किशन!'' अचानक मधु उसे पुकार उठी पर उसकी आवाज लड़खड़ा गयी।

''क्या हुआ मम्मी जी!''

अनन्या की घबराई हुई आवाज उसे सुनाई दी। मधु पसीने–पसीने हो रही थी। पलकें खुल गयीं। भरभरा कर आँसू कानों तक बह आए।

''अब दर्द कैसा है!''

मधु ने इशारे से उसे चुप रहने को कहा। दर्द अब भी कलाई के बीच नली में आहिस्ता–आहिस्ता बह रहा था। वह खुद ही अपना बायाँ हाथ सहला रही थी। उसकी आँखों से गर्म धारा बह कर कानों से होती हुयी बालों को भिगोने लगी थी। मधु की आँखें स्वतः ही मुंद गयीं। लोग कहते हैं कि मृत्यु से कुछ समय पूर्व जीवन की सारी बातें याद आ जाती हैं। तो क्या यह दर्द मुझे लेने आया है! तो ले जाय। पर काश! वह एक बार किशन से मिल पाती। तो चैन से मर पाती।

'किशन! अंजाने ही तुम्हारा दिल दुखाने की कड़ी सजा भोगी है मैंने।' जैसे मन ही मन मधु किशन से कह रही हो तभी गेट पीटने की आवाज आई। साथ में अनन्या के दौड़ने की भी। गेट खोलते ही मुकुल की कर्कश आवाज सुनाई पड़ी।

''क्या हो गया? इतना फोन क्यों कर रही थी? तुम्हें पता भी है कि कितना काम रहता है मुझे ऑफिस में!''

''जानती हूँ पापा जी! पर क्या करती? ये भी शहर से बाहर हैं। किससे कहती? मम्मी जी की तबीयत अचानक ज्यादा बिगड़ गई है। उन्हें अभी डॉक्टर के पास ले जाना पड़ेगा।'' लगा जैसे अनन्या अभी रो देगी।

पदचाप पास आकर रुक गई थी।

"क्या हुआ है?" आवाज में तल्खी थी।

"..............."

"मुँह में दही जमी है क्या? बोलती क्यों नहीं?" इस बार तो जैसे विष ही घुल गया था। थोड़ी देर बाद ही उसके माथे पर भारी–सा हाथ आ लगा।

"कुछ भी तो नहीं है। ये रोज का ड्रामा है इनका। आज मेरे पास बिलकुल समय नहीं है। कल या परसों जब अपने रुटीन चेकअप के लिए जाऊँगा, तब चाहें तो ये मेरे साथ चल सकती हैं। तब तक कोई पेनकिलर हो तो इन्हें दे दो। नाटक बंद हो जायेगा और हाँ, तुम भी आराम करो जा कर। इतना परेशान होने की कोई जरूरत नहीं।'' आवाज के साथ–साथ पदचाप भी दूर होती–सी लगी। सुन कर लगा जैसे किसी ने उसके कानों में खौलता तेल उड़ेल दिया हो। इतनी अवहेलना! इतना अपमान! पर वह इस व्यक्ति से और उम्मीद भी क्या कर सकती है?

"कुछ भी तो नहीं है। ये रोज का ड्रामा है इनका। आज मेरे पास बिलकुल समय नहीं है। कल या परसों जब अपने रुटीन चेकअप के लिए जाऊँगा, तब चाहें तो ये मेरे साथ चल सकती हैं। तब तक कोई पेनकिलर हो तो इन्हें दे दो। नाटक बंद हो जायेगा और हाँ, तुम भी आराम करो जा कर। इतना परेशान होने की कोई जरूरत नहीं।'' आवाज के साथ–साथ पदचाप भी दूर होती–सी लगी। सुन कर लगा जैसे किसी ने उसके कानों में खौलता तेल उड़ेल दिया हो। इतनी अवहेलना! इतना अपमान!

तभी कलाई की नली में दुबका दर्द, सर्प की भाँति फुँफकारता कंधे से होता हुआ दिल में उतर गया। पीड़ा से बिलबिला उठी वह। दाँत पर दाँत बैठाए शव–सी पड़ी रही। साँसें चल रही थीं, बस इतने से वह जीवित जान पड़ रही थी। उसकी पलकों के पीछे घने अंधकार में फिर से अतीत के कुछ चित्र उभरने लगे थे।

बड़े से आँगन में एक तरफ बैठी सुहाग के गीत गाती स्त्रियाँ। मंत्रोच्चार करते पुरोहित। उसके हल्दी लगे कोमल हाथों को किसी बर्फ से ठंडे, ठोस हाथों में सौपते हुए आँसू छलकाते माँ–बाबूजी और धधकता हवन कुण्ड! जिसके इर्द–गिर्द वही हाथ थामे वह घूम रही है।

तभी अचानक सुकोमल मधुर बोल के साथ उसकी आँखों में एक अलग ही दृश्य उभर आया था।

सुबह का समय है। प्लास्टिक का फोन लिए तीन वर्ष का अतुल खेल रहा है। मुकुल बाथरूम के पास सिंक के ऊपर लगे आइने के सामने खड़े शेविंग कर रहे हैं।

"हेलो मम्मा!"

"हाँ बेटा!" अपना काम निबटाते हुए मधु बोली।

"त्या तल लही हो?

"ताम तल लही हूँ।" उसी की तरह तुतला कर बोली मधु।

"त्यूँ तल लही हो ताम?" फोन कान से सटाए अतुल बोल रहा है।

"त्यूँकि बाबू का लूम गंदा हो गया है।" कहते हुए वह जोर से हँस पड़ी।

"एक तो संडे के दिन दसियों काम बढ़ जाते हैं उसके बाद इनसे फोन पर इनकी भाषा में बातें करो। देखो बेटा! पापा से कहो घर में फोन लगवा लें फिर खूब बातें करते रहना। ये तो नकली है, इसमें तो आवाज भी नहीं आती।" कहते हुए वह बाथरूम में नहाने के लिए घुसी और पलट कर जैसे ही दरवाजा बंद करने चली, कि मुकुल ने दरवाजे पर अपना एक हाथ रख दिया। वह असमंजस से उसका मुँह ताकने लगी। शायद कोई काम है या मुकुल पहले बाथरूम यूज करना चाहते हैं। क्षण में ही उसके मन में अनेक विचार घूम गए। इतनी देर में मुकुल ने उसकी दोनों कलाइयाँ कस के पकड़ ली हैं। एक–एक कर चट्–चट्–चट् उसकी चूड़ियाँ टूटती जा रही हैं। वह हतप्रभ उसकी ओर देखे जा रही है। सोच रही है कि शायद मुकुल उसके साथ परिहास कर रहे हैं। नाराजगी जैसी तो कोई बात ही नहीं की उसने। अभी हँस देगें। परन्तु जब मुकुल के चेहरे पर हँसी की कोई रेखा नहीं दिखी तब मधु ने अपनी कलाइयों पर निगाह डाली। टूटी चूड़ियों से घायल दोनों कलाइयों से लहू की धार फूट कर नीचे टपक रही है। मुकुल के दोनों हाथ भी उसके खून से रंग गए हैं। वह समझ नहीं पा रही है कि ये क्या हो रहा है। हमेशा तो दाल में नमक कम–ज्यादा हो जाता है या उसके पसंद का खाना नहीं होता पर आज...! क्रोध से मुकुल का चेहरा विकृत हो चुका है। पर क्यों? क्या किया उसने? वह तो अतुल के साथ खेल रही थी। सोच ही रही थी मधु कि तभी उसे जोर का धक्का लगा और वह भीतरी दीवार से जा टकराई। फिर तो नाक की लौंग और कान की बालियाँ टूट कर बाथरूम के किसी कोने में जा गिरी हैं। अब बर्दाश्त की पराकाष्ठा हो गयी है। वह जोर से चीखने लगी है,' बचाओ मुझे, कोई तो बचाओ। मैं मर जाऊँगी! कोई बचा लो मुझे!' घर में भीड़ उमड़ पड़ी है। पास ही रह रहे मुकुल के माता–पिता, भाई, उनकी पत्नियाँ, किराएदार, सब घर में आ गए हैं। कमरा खचाखच भरा है। अपने परिजनों को देख मुकुल और भी उग्र हो गया है।

'स्साली...! अपने यार से बात करने के लिए तुझे फोन चाहिए। उसी से क्यों नहीं कहती कि फोन लगवा दे! बच्चे को क्यों भड़काती है? हर हफ्ते तो आता है फिर भी बातों से तेरा पेट नहीं भरता!'

सुन कर घायल मधु को लगा कि धरती फटती और वह उसमें समा जाती। ध्रुव भैया उसकी बुआ के बेटे हैं जो महीने भर पहले ही ट्रांसफर हो कर इस शहर में आये हैं और कभी–कभी उसके घर भी आ जाते हैं। मुकुल उन्हीं के लिए विष वमन कर रहा था।

उसका दम घुट रहा है। नाखूनों से चिरा चेहरा जल रहा है। कलाइयों पर किसी ने कपड़ा लपेट दिया है। वह उस भीड़ से निकलना चाहती है। बार–बार हाथ बढ़ा कर सबको हटने के लिए कह रही है पर उसे खींच कर एक कमरे में बिठा दिया गया है। सबने उसे घेर रखा है। वह बाहर निकलने के लिए गुहार लगा रही है। तभी किसी ने सूज कर मोटे हुए उसके फटे होंठों से पानी का गिलास लगा दिया है। किसी तरह उसने औषधि–सा दो घूँट भरा है। पानी पीते ही कुछ राहत–सी मिली है। उसकी पलकें मुंदती जा रही हैं और सन्निपात में होंठ बुदबुदाते जा रहे हैं–

"कोई बाहर ले चलो मुझे, कोई तो बाहर ले चलो। को.. .ई...तो...!"

"प्लीज, हिम्मत रखिए मम्मी जी! बस्स पाँच मिनट में कैब पहुँचने वाली है। आपके पुराने पर्चे से मुझे डॉक्टर का नम्बर मिल गया है। उन्होंने मेरी रिक्वेस्ट पर आपको अप्वाइंटमेंट भी दे दिया है।" पास खड़ी अनन्या सास को सांत्वना देते हुए फोन पर कैब की लोकेशन देख रही थी। ■

पता : 437–दमोदर नगर, बर्रा,

कानपुर–208027 (उ.प्र.)

मो. : 09140044021

ड्राइव टाइम कॉल

❑ विनीता अस्थाना

स्वाति की सुबह हमेशा जैसी सुन्दर थी। जाते हुए भादों ने उसे सुबह की सैर पर भिगो दिया था। उसके पसंदीदा मौसम बारिश के आखिरी कुछ दिन बचे थे जिसे वो अगली बारिश तक खुद में समेट लेना चाहती थी। भीगी भागी स्वाति जब तक अपनी कॉलोनी के अंदर पहुंची, देर हो चुकी थी। टाइम देख कर वो हड़बड़ा गयी।

'बच्चों की बस आने वाली होगी। देर हो गयी आज तो।' सोचती हुई वो घर के अंदर घुसी और सीधे ही किचन में जाकर बच्चों का टिफिन पैक करने लगी। कान्हा और वृंदा पहले ही तैयार थे। टिफिन भी उसकी महराजिन मंजू बना चुकी थी। हर काम अपने समय से हो चुका था लेकिन माँ का दिल है न, जब तक खुद काम में हाथ न लगाए उसे चैन ही नहीं पड़ता। बच्चों को भेजकर वो भी गुनगुनाती हुई ऑफिस के लिए तैयार होने लगी।

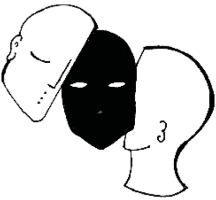

''क्या बात है, आज तो कोई मूड में लग रहा है।'' आइने के आगे संवारती स्वाति को गुनगुनाते देखकर अभिनव ने उसे बाँहों में भर लिया।

''अभी! देर हो जाएगी, छोड़ो मुझे'' अभिनव को प्यार से झिड़कती हुई स्वाति लाल हो गई।

रोज ही दोनों साथ में ऑफिस के लिए निकलते थे। स्वाति पहले अभिनव को उसके ऑफिस पर ड्राप करती फिर अपने ऑफिस चली जाती। रोज की तरह दोनों साथ निकले और अपने अपने ऑफिस चले गए। दिन की शुरुआत जितनी अच्छी थी ऑफिस पहुँचते ही स्वाति का उतनी ही बुरी खबर से सामना हुआ। बीती रात उसका एक सहकर्मी आलोक, नशे की हालत में ऑफिस की बालकनी से नीचे गिर गया और उसकी मौत हो गयी थी। ऑफिस में पुलिस और मीडिया का जमावड़ा था। सबके बयान लिए जा रहे थे। मीडिया वाले भी हर किसी से बात करने की कोशिश कर रहे थे। अचानक हुई इस दुर्घटना से स्वाति स्तब्ध रह गयी। वो समझ नहीं पा रही थी कि 'जो अलोक कल दिन भर अपनी तरक्की को लेकर खुश था, जो अपनी गर्लफ्रेंड को शादी के लिए प्रपोज करने वाला था उसके साथ ऐसा कैसे हुआ होगा? वो न सिर्फ दुःखी थी बल्कि बहुत बेचैन भी थी। इसी उधेड़बुन में वो गलती से लाइव न्यूज करते रिपोर्टर्स के फ्रेम में आ गयी। हड़बड़ाई हुई स्वाति ने संकोच में खुद को लेडीज़ बाथरूम में बंद कर लिया।

'आलोक ने ऑफिस में नशा कैसे किया? आखिर कौन था उसके साथ?' उसके मन में सवाल बढ़ते जा रहे थे। इन्हीं सवालों के जवाब बाहर मीडिया और पुलिस भी ढूंढ रही थी। स्वाति ने अपने चेहरे को धोया और बाहर की तरफ बढ़ी कि उसके फोन की घंटी बजने लगी। उसने फोन उठा लिया।

''हेलो''

''तुम ठीक हो ?''

''कौन ?''

''स्वाति? स्वाति वत्स बोल रही हो न?''

''हाँ, मैं स्वाति ही बोल रही हूँ! आप कौन?''

''पहचाना नहीं? मैं निमिष राठौड़।''

''निमिष!! दिल्ली यूनिवर्सिटी वाले निमिष?''

''बिलकुल सही। तो याद हूँ तुम्हें।''

"कैसी बात कर रहे हो। फेसबुक पर जुड़े हुए हैं हम।"

"ऐसे जुड़ने का क्या फायदा, जब बस जन्मदिन और नए साल की शुभकामनाएं ही देती हो?"

निमिष और स्वाति ने पंद्रह साल पहले साथ में ही यूनिवर्सिटी से पढ़ाई करी थी। दोनों के बीच कभी ज्यादा दोस्ती या बातचीत नहीं थी। फेसबुक के आ जाने के बाद सभी लोगों ने अपने पुराने दोस्तों और सहपाठियों को ढूंढ लिया था और तभी से स्वाति और निमिष भी वहां जुड़े थे। निमिष एक नामी न्यूज चैनल का हेड था और स्वाति को अपने चैनल की लाइव न्यूज के फ्रेम में देख कर ही उसे कॉल किया था। कॉलेज में भी दोनों के बीच ज्यादा बातचीत नहीं थी लेकिन स्वाति को कॉलेज में भी उसका इंटेलिजेन्स अच्छा लगता था। उसकी वाणी और स्वाभाव में हमेशा ही नरमी रहती। कुछ देर निमिष से बात करके उसका दिमागी बोझ थोड़ा हल्का हुआ। अब जबकि निमिष ने स्वाति के चेहरे की परेशानी कुछ सेकण्ड्स के वीडियो में ही समझ ली थी, तो उसे निमिष की परवाह अच्छी लग रही थी। शायद ये परवाह भी उसके स्वाभाव का ही हिस्सा थी।

निमिष और स्वाति ने पंद्रह साल पहले साथ में ही यूनिवर्सिटी से पढ़ाई करी थी। दोनों के बीच कभी ज्यादा दोस्ती या बातचीत नहीं थी। फेसबुक के आ जाने के बाद सभी लोगों ने अपने पुराने दोस्तों और सहपाठियों को ढूंढ लिया था और तभी से स्वाति और निमिष भी वहां जुड़े थे। निमिष एक नामी न्यूज चैनल का हेड था और स्वाति को अपने चैनल की लाइव न्यूज के फ्रेम में देख कर ही उसे कॉल किया था। कॉलेज में भी दोनों के बीच ज्यादा बातचीत नहीं थी लेकिन स्वाति को कॉलेज में भी उसका इंटेलिजेन्स अच्छा लगता था। उसकी वाणी और स्वाभाव में हमेशा ही नरमी रहती। कुछ देर निमिष से बात करके उसका दिमागी बोझ थोड़ा हल्का हुआ। अब जबकि निमिष ने स्वाति के चेहरे की परेशानी कुछ सेकण्ड्स के वीडियो में ही समझ ली थी, तो उसे निमिष की परवाह अच्छी लग रही थी। शायद ये परवाह भी उसके स्वाभाव का ही हिस्सा थी।

उस दिन के बाद रोज ही स्वाति और निमिष में फोन पर बात होने लगी। वो ऑफिस से निकलता था, उस वक्त तक स्वाति अपने ऑफिस पहुँच चुकी होती थी। वो जब घर से निकलता तो उसे फोन मिला लेता और जब तक अपने ऑफिस पहुँचता तब तक स्वाति से बात करता रहता। कई बार तो वो रास्ते में ही होती और निमिष का फोन आ जाता। स्वाति ने अभिनव को निमिष के बारे में बता दिया था। उससे बात करके जो भी पुरानी यादें लौटतीं उनकी कहानी वो अभिनव को हर रोज सुनाती। अभिनव को स्वाति के दोस्तों से कभी कोई दिक्कत नहीं थी।

कॉलेज के दिनों की पुरानी बातें हों या रोजमर्रा की बातें, निमिष और स्वाति के बीच अब कोई पर्दा नहीं था। एक दिन निमिष ने स्वाति को बताया कि जितनी बातें वो उससे करता है उतनी बातें उसने कभी भी किसी और से भी नहीं की हैं। न अपने परिवार में न ही पत्नी के साथ। "सच में यार ! पति पत्नी की क्या बात कर रही हो, मुझे तो लगता है मैंने कभी भी किसी से इतनी बातें नहीं करीं जितनी मैं तुमसे करता हूँ! कैसे तुम्हारे साथ इतना सहज हूँ कि बिना किसी लाग लपेट के हर बात कह पाता हूँ?"

"अच्छा? लेकिन मैं तो हमेशा से इतनी बातूनी हूँ। मैं तो रोज की बात रोज न करूँ तो पेट में दर्द होने लगे।" वो हंसने लगी।

"हाँ, वो तो तुम कॉलेज से ही ऐसी हो। लेकिन तुम्हारी सांगत मुझे बदल रही है। मैं तो अपने मन की बात किसी से नहीं बांटता।"

"घुटन नहीं होती ?"

"आदत है सब अपने अंदर रखने की। खुशी हो या परेशानी, सब बस अंदर ही रहा हमेशा। इसीलिए मैं तुम्हारे जैसा एक्सप्रेसिव नहीं हूँ।"

"चलो तुम्हारे बंद ढक्कन को खोलते हैं और देखते हैं क्या–क्या निकलेगा।"

निमिष सच कह रहा था। वो मितभाषी था और वो अपने मन की बात कभी किसी से नहीं कर पता था। जबकि

स्वाति के साथ वो हर बात बिना किसी तकल्लुफ के कर लेता था। निमिष जितना इस बात पर जोर देता स्वाति उतना ही इसे हल्के में लेती। लेकिन स्वाति को एहसास हो रहा था कि उन दोनों के बीच कुछ तो बदल गया था। जब कभी स्वाति इस बात पर मंथन करती तो निमिष उसे मना करता। वो किसी भी सामाजिक सोच के चलते अपने रिश्ते को खोना नहीं चाहता था। आखिर स्वाति के साथ उसका गजब का सामंजस्य था, वो बिना कहे एक दूसरे की बात यहाँ तक कि भाव भी समझ जाते। निमिष से अब सब्र नहीं हो रहा था। वो जानता था कि उसका लगाव स्वाति के प्रति बढ़ता उसका प्रेम ही है।

"सुनो, मुझे तुमसे मिलना है।"

"अचानक? ठीक तो हो?"

"बोलो न, मिलोगी?"

"हाँ, क्यों नहीं! इस इतवार को ही मिलते हैं।"

लगभग महीने भर तक फोन पर बात करने के बाद निमिष और स्वाति कॉलेज के बाद पहली बार रु–ब–रु मिले। निमिष आज भी वैसा ही था जबकि कॉलेज के जमाने में सींक सी दिखने वाली स्वाति अब भरी पूरी महिला हो गयी थी। उसका वजन उस पर फबता था। उनका साथ कपूर और आग जैसा था, स्वाति की हंसी की खनक और बातों की खुशबू से निमिष का मन महक रहा था। जितनी देर वो स्वाति के साथ रहता उसके चेहरे की मुस्कान और आँखों की चमक कायम रहते। उसे देख कर कोई भी समझ सकता था कि वो पूरी तरह से स्वाति के प्यार में डूबा है। दूर से देखने वाले भी उनके बीच का स्पार्क महसूस कर सकते थे। ऐसे में ये बात उन दोनों को खुद महसूस न हो रही हो ये संभव नहीं था। निमिष इस अनाम से प्यारे रिश्ते में कोई सवाल नहीं चाहता था और अपने बीच तेजी से बदलती भावनाओं को वो जानबूझ कर अनदेखा करने लगा। स्वाति को निमिष की आँखों का प्यार और आकांक्षाएं साफ दिख रही थीं। मज़ाक–मज़ाक में वो उसे कई बार प्यार में न पड़ने के लिए चेता चुकी थी। निमिष भी उसकी बात हर बार हंसी में उड़ा देता। स्वाति ने मान लिया कि ये सिर्फ दोस्ती नहीं है बल्कि एक दूसरे के प्रति बढ़ता उनका प्रेम और आकर्षण भी है। लेकिन निमिष उससे सहमत नहीं था, वो कहता कि स्वाति बेवजह परेशान हो रही है और उसे इतना सोचना नहीं चाहिए। उसे अपनी बढ़ती दोस्ती में अपने पार्टनर्स के लिए कोई धोखा नहीं दिख रहा था।

निमिष सच कह रहा था। वो मितभाषी था और वो अपने मन की बात कभी किसी से नहीं कर पता था। जबकि स्वाति के साथ वो हर बात बिना किसी तकल्लुफ के कर लेता था। निमिष जितना इस बात पर जोर देता स्वाति उतना ही इसे हल्के में लेती। लेकिन स्वाति को एहसास हो रहा था कि उन दोनों के बीच कुछ तो बदल गया था। जब कभी स्वाति इस बात पर मंथन करती तो निमिष उसे मना करता। वो किसी भी सामाजिक सोच के चलते अपने रिश्ते को खोना नहीं चाहता था। आखिर स्वाति के साथ उसका गजब का सामंजस्य था, वो बिना कहे एक दूसरे की बात यहाँ तक कि भाव भी समझ जाते। निमिष से अब सब्र नहीं हो रहा था। वो जानता था कि उसका लगाव स्वाति के प्रति बढ़ता उसका प्रेम ही है।

स्वाति ने खुद को बहुत रोका लेकिन उनकी बातचीत की तरह उनके मिलने का सिलसिला भी बढ़ता गया। कभी निमिष उसके ऑफिस की तरफ आ जाता और उसके साथ कॉफी पी लेता। कभी लंच पैक करा के साथ ही ले आता और दोनों गाड़ी में ही बोलते बतियाते लंच करते। ऐसा लग रहा था कि अपनी भावनाओं और परिस्थितियों दोनों पर उन दोनों का कोई बस न रह गया हो।

"यार तुम सोचती बहुत ज्यादा हो! अगर दोस्ती से ज्यादा है तब भी ये कोई चीटिंग नहीं है। हमें भी खुश रहने का हक है। अपने पसंदीदा इंसान के साथ समय बिताना अगर किसी को धोखा लगे तो लगा करे। मुझे फर्क नहीं पड़ता।"

"निमिष, ये दोस्ती नहीं है। ये जो तुम्हारी आँखों में दिखता है उससे मुझे घबराहट होती है। मैं अभी को धोखा नहीं दे सकती। बात को समझो हमें मिलना फौरन बंद करना होगा। प्यार व्यार में पड़ जाओगे तो बस। हमें बात भी कम करनी चाहिए।"

"पागल मत बनो स्वाति! ये जो वक्त मैं तुम्हारे साथ जीता हूँ वो मेरे पूरे दिन की खुराक है। मुझे नहीं पता तुमसे मिलने से पहले मैं कैसे जिया। मुझे बस इतना पता है कि मेरे नीरस जीवन में जो भी रंग हैं उसकी वजह यही समय है जो मैं तुमसे बात करते हुए, तुम्हें देखते हुए बिताता हूँ।" निमिष ने कातर आँखों से स्वाति से उसका चैन न छीनने की गुज़ारिश करी।

स्वाति समझ रही थी निमिष उससे अपने प्यार का इज़हार कर देना चाहता है लेकिन स्वाति से दूर होने का डर उसे रोक रहा था। उस रोज़ स्वाति ने उससे कोई वादा नहीं किया बल्कि उसे सांत्वना देकर चली गयी। धीरे–धीरे उसने निमिष के कॉल लेना कम कर दिया। जब भी वो मिलने को कहता स्वाति कोई न कोई बहाना बना देती। वो ऑफिस तक आ जाता तब भी वो मीटिंग का बहाना करके उससे नहीं

मिलती। ऐसा नहीं था कि उसके इस व्यवहार से सिर्फ निमिष दुःखी था, दुःखी वो खुद भी थी लेकिन उसे पता था कि उसकी ही तरह निमिष भी शादीशुदा है। वो जितना अपने और निमिष के रिश्ते की पड़ताल करती उसे अपना कदम सही लगता। वो अभिनव से प्यार करती थी। उनके जीवन में कोई कमी नहीं थी और वो साथ में खुशहाल भी थे फिर क्यों वो उसने निमिष को इतना आगे बढ़ने दिया? 'मुझे न प्यार की तलाश है न प्रेमी की। कैसे संभव है एक इंसान के प्रेम में होते हुए किसी दूसरे की तरफ आकर्षित हो जाना? क्या मैं आकर्षित हूँ या मुझे भी निमिष से प्रेम हो रहा है?' वो जितना खुद को मथ रही थी उतने ही अलग–अलग जवाब उसके ज़ेहन में आ रहे थे। 'नहीं मुझे निमिष से प्यार नहीं है। मुझे बस ये एहसास अच्छा लग रहा है कि कोई मेरी परवाह करता है। नियम से मुझसे बात करता है और मुझे अपने जीवन की प्राथमिकता मानता है। मुझे सिर्फ इस एहसास से प्यार है।' उसे लगा कि जबसे निमिष ने अपने और अपनी पत्नी पूजा के बीच के संबंधों के विषय में बताया तब से उसे निमिष की ज्यादा फिक्र होने लगी थी। 'निमिष और पूजा के सम्बन्ध किसी बुजुर्ग जोड़े से भी ज्यादा नीरस थे। उनके बीच न तो संवाद था न ही दैहिक सम्बन्ध। कम से कम निमिष का तो यही कहना था। उसके जीवन के बारे में सुनने के बाद स्वाति को उससे सहानुभूति होने लगी थी। उस जैसा सुलझा हुआ और प्यारा इंसान अपने जीवन में हर खुशी का हकदार था, प्यार का भी।' स्वाति अपनी सोच की परतों से खुद ही घबरा रही थी। 'कोई भी तर्क, कोई भी वज़ह इस बात को सही नहीं ठहरा सकता कि मैं एक खुशहाल शादीशुदा जीवन जी रही हूँ और ऐसे में अपने पंद्रह साल पुराने एक दोस्त के लिए मेरा दिल पिघल रहा है?'

"पागल मत बनो स्वाति! ये जो वक्त मैं तुम्हारे साथ जीता हूँ वो मेरे पूरे दिन की खुराक है। मुझे नहीं पता तुमसे मिलने से पहले मैं कैसे जिया। मुझे बस इतना पता है कि मेरे नीरस जीवन में जो भी रंग हैं उसकी वजह यही समय है जो मैं तुमसे बात करते हुए, तुम्हें देखते हुए बिताता हूँ।" निमिष ने कातर आँखों से स्वाति से उसका चैन न छीनने की गुजारिश करी।

स्वाति ग्लानि से भर गयी और उसने निमिष से हर संवाद खत्म करने का फैसला लिया। उसे निमिष के साथ बिताया हुआ हर पल अभिनव के साथ की हुई बेवफाई लग रहा था। वो निमिष को दिए हुए समय की भरपाई अभिनव के साथ अच्छा वक्त गुजार के करना चाहती थी। स्वाति ने दीवाली की पुरानी लाइट्स को स्टोर से निकाल के अपनी हरी भरी बालकनी में लगाया। सुनहरी लाइट्स में पौधों की खूबसूरती और निखर गयी। बेंत के सोफे पर नए चढ़ाये कुशन कवर सज रहे थे। अभिनव घर में घुसा तो स्वाति ने तैयार हो कर उसका स्वागत किया। अभिनव के लिए ये वक्त सुखद आश्चर्य जैसा था। बालकनी में गरमा गरम कॉफी के मग उसका इंतज़ार कर रहे थे।

"क्या बात है, अभी से दीवाली की सजावट शुरू हो गयी ?"

"हट ! ये दीवाली की सजावट है ? शादी के कई साल बीत जाएँ तो यही होता है, स्पेशल फील कराने की कोशिश का अंजाम देखो जरा।"

"सॉरी बाबा। मज़ाक कर रहा था। जीवन में रस बना रहे उसके लिए प्यार में ये सब छोटी छोटी बातें बहुत मायने रखती हैं।"

देर रात तक दोनों वहीं बैठे बातें करते रहे। घर और नौकरी की भागदौड़ में दोनों को आपस में बातें करने का मौका कम मिलता था। हालाँकि स्वाति अपने हिस्से की बात रोज़ अभिनव से बोल ही लेती थी लेकिन वो एकतरफा संवाद था। अभिनव ने डिसाइड किया कि अब से हर शाम वो दोनों साथ में कॉफी पिएंगे और हर हफ्ते में कम से कम एक बार साथ में अपने दफ्तर से अलग कहीं जायेंगे। स्वाति को अब हल्का महसूस हो रहा था। हवा में घुले संगीत के साथ उसके ज़ेहन में एक चेहरा बार–बार उभर रहा था लेकिन उसने खुद को कड़ाई से रोक लिया और अभिनव को निहारने लगी। 'कितनी समानता है अभिनव और निमिष में। दोनों कम बोलते हैं। दोनों को मेरी परवाह है और शायद मुझसे प्यार भी। शायद तभी मैं निमिष को पसंद करने लगी। 'लेकिन निमिष ने मुझसे संवाद की अपनी कोशिश चंद दिनों में ही बंद कर दी। प्यार तो नहीं ही रहा होगा उसे। शायद आदत हो गयी हो बात करने की !'

स्वाति सोच ही रही थी कि अभिनव ने पूछा, "अरे सुनो, वो तुम्हारे ड्राइव टाइम कॉल का क्या हाल है?"

अभिनव ने उससे निमिष का हाल पूछा था लेकिन उसकी आवाज़ के साथ ही स्वाति के दिल में कुछ झन्ना के बिखर गया। 'क्या मैं सिर्फ उसकी ड्राइव टाइम कॉल थी?' ■

पता : 506, एक्सप्रेशन टॉवर, कौशाम्बी सेक्टर–14, गाजियाबाद–201010

मो. : 9910165466

रविशंकर पाण्डेय की तीन कविताएं

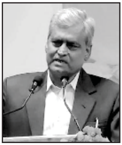

हो गए साठ के

कहने को हो गए साठ के,
फिर भी रहे
अकल के आधे
लेकिन पूरे दिखें गांठ के !

बहती गंगा में
औरों सा
हाथ न अपने धो पाये जो
भेड़ चाल का हिस्सा
बनकर लाभ
न इसका ले पाये जो,

अपना उल्लू
साध न पाये
उल्लू हैं वे महज काठ के !

गाँव देश की
एक कहावत
कहते हैं 'साठा सो पाठा'
लेकिन एक
सनक कर देती
अच्छे भले काम को माठा,

एक जने का
बोझ बन रहे
जूते चप्पल सात–आठ के !

कथावार्ता एक तरफ तो
एक तरफ
है चोरी लूका

भड़ितंत्र में
गया काम से
कोई अगर जरा भी चूका,

पोंगा पंडित
रहे आज तक हम
बस पूजा और पाठ के !

बिना पढ़े वे
दुनियाँ बेंचें
हम तो रहते रहे ककहरा
माटी के
माधव हम ठहरे
उनका हर अंदाज़ सुनहरा,

पढ़े फारसी
तेल बेंचते
घर के रहे न रहे घाट के !!

चढ़े फांसी में

खुद को अफसर
रहे समझते
गिने गए पर चपरासी में !

इस मुग़ालते में
रहते थे
रातों दिन हम फूले–फूले
सरकारी पीनक में जैसे
हम अपने
सब रिश्ते भूले,

आधी उमर
काट दी हमने
बस सपनों में फंतासी में!

नहीं निभाया

ठीक–ठाक से
अपने घर की जिम्मेदारी
सदा पेश आये जनता से
ज्यों दामाद
बने सरकारी,

मन में एक
प्रयाग बसाए
फेंके गए मगर झाँसी में !

हमें टीम में
काम मिला था
लाने को बस पानी पत्ता

पर अतिरिक्त
खिलाड़ी जैसा
थामा कभी न 'बैट' अलबत्ता,

हार मिली तो
एक अकेला
चढ़ा सिर्फ मैं ही फांसी में !

थे तो बस–
चाकर सरकारी
पाँव न पड़ते थे ज़मीन में
पैरों की ज़मीन
खिसकी तो
रहे न तेरह और तीन में,

सारी उमर
कटी मगहर में
मरने क्या जायें काशी में !
अब अपने ही
लेते हमको
बस मज़ाक में या हंसी में !!

क्या पाया क्या खोया

सोच रहा हूँ बैठे–बैठे
अब तक
क्या पाया क्या खोया !

कागज़ काले बहुत किये
दीदे भी फोड़े
काम न आये टोने टोटके
कोई थोड़े,
जब भी हुआ अकेला
तब जी भर कर रोया !

सबका–
होने के चक्कर में
हुआ न अपना
पथराई आँखों में
ढोया टूटा सपना
नींद चुराकर औरों की
मैं कभी न सोया !

काम किया जीवन भर
मैंने अफलातूनी
खाली–खाली जेबों में
अब भांग न भूनी,
पकी उम्र में काट रहा
जो मैंने बोया!

उम्र ढल गई
हो न सका मन बीतराग है...
रंग उड़ गए चादर के
रह गया दाग है,
मन मैला ही रहा
बहुत गंगा में धोया !

■

पता : 5/246, गोमतीनगर विस्तार,
लखनऊ–226010
मो. :9140852665

रेत समाधि के बहाने

❑ अनुजा

पढ़ने की लगन बचपन से थी। साहित्य के क्लासिक्स पढ़े अपने पढ़ने की लगन में, बेपरवाह। प्रेमचंद को ऐसे पढ़ा जैसे बस लहर बहती है। साहित्य के भीतर छिद्रान्वेषण के लिए कभी जगह नहीं पाई। जिस किताब और लेखक ने बांधा, उसे पढ़ते गए। साहित्य की सामयिक गतिविधियों के संपर्क में जब आए तो उस दौर के लेखकों से परिचय बढ़ा। महिला लेखन के दौर में अनेक लेखिकाओं के साथ ही गीतांजलि श्री को पढ़ने की बड़ी ललक रहती थी, पर कभी ऐसा संयोग हो ही नहीं पाया कि उनकी किसी कहानी, उपन्यास या संग्रह को पढ़ पाती। बीच में काफी लंबी लाइन होती थी। इस बरस अंततः गीतांजलि श्री के लेखन से परिचय हो ही गया। जब 'रेत समाधि' चर्चा में आई। किसी हिंदी उपन्यास को बुकर पुरस्कार मिला। हिंदी की दुनिया में यह एक बड़ी उपलब्धि थी। हालांकि 'रेत समाधि' को पुरस्कार मिलने का माध्यम उसका अंग्रेज़ी अनुवाद 'टॉम्ब ऑफ सैंड' बनी पर अंग्रेज़ी में ही सही, श्रेय तो मूल कृति को ही जाता है। अब एक छटपटाहट बनी कि किसी तरह इस किताब को पढ़ा जाए और अंततः वह किताब हाथ आ ही गई। किताब पढ़ने के बाद मन में अनेक प्रश्न उठे, अपनी भाषा और कहन के कलेवर में अद्भुत रचनात्मकता से युक्त इस उपन्यास के साथ अंग्रेजी में कैसे न्याय किया गया होगा, क्योंकि अनुवाद का अपना एक संसार होता है, और हर भाषा की अपनी सीमाएं और शैली। अब रेत समाधि की भाषा, कहन और प्रस्तुतिकरण, जो सामान्य तौर उपन्यासों के शिल्प और शैली में अत्यन्त भिन्न है, अपनी कथा और कहन में वह जितनी सामान्य, असामान्य और चमत्कारिक है क्या अंग्रेज़ी में वैसे ही प्रयोग किए गए, यथावत्? क्या एक भाषा से दूसरी भाषा में जाने पर चमत्कार कम हुए, कहन को हूबहू वैसा ही रख पाया गया, या अंग्रेज़ी की शैली के हिसाब से उसे बदल दिया गया? इस जिज्ञासा ने अनूदित रचना की खोज शुरू करवाई और अंततः वह मिली। टॉम्ब ऑफ सैंड के कुछ पन्ने गूगल के संसार में मिले, और उन कुछ पन्नों में कहन हिंदी से भिन्न है। भाषा के साथ शैली में बदलाव है। कहानी वहां सीधी और सहज चलती है, कहीं–कहीं, कुछ शब्द ध्वनियों का प्रयोग किया गया है। इस किताब को किसी एक भाव, समझ या राय के बिना पढ़ा, सिर्फ पढ़ा, रसहीनता और रसज्ञता के बीच झूलते हुए, पकते और आनंदित होते हुए। कथा और कहन के बीच की यह रस्साकशी अंत तक चलती रहती। यकीनन इसकी पढ़ाई पैसेंजर ट्रेन की गति से हुई, फर्क सिर्फ इतना था

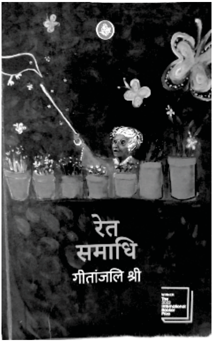

कि पैसेंजर ट्रेन को किसी स्टेशन से आगे बढ़ने के लिए पिछले स्टेशन से यात्रा पुनः नहीं शुरू करनी पड़ती है पर 'रेत समाधि' के पाठक को यह मशक्कत करनी पड़ती है, अब इसे आप इसकी कमी समझिए या खूबी, यह प्रत्येक पाठक का अपना निजी मत हो सकता है। साहित्य में प्रवाह और आनंद को खोजने वालों को 'रेत समाधि' थोड़ी उबाऊ लग सकती है पर कथा का सूत्र जैसे ही प्रवाह में आता है, यह बांध भी लेती है। कथानक के बीच में मूर्त अमूर्त और प्रतीकात्मक प्रसंग, जो वहां पर अनावश्यक से प्रतीत होते हैं, कथा के रस–रंग को खत्म करते हैं, जैसे–'बड़े' बेटी के घर पेड़ के रास्ते अम्मा को देखने जाते हैं और वहां कौआ संसार की बातें बीच में आ जाती हैं। कौआ संसार समूह की यह कथा बीच में दखलंदाजी प्रतीत होती है। पाठक की 'बड़े' की कोशिशों और प्रतिक्रियाओं को देखने समझने की चेष्टा के बीच में यह प्रसंग पूर्णतः अप्रासंगिक और व्यवधान प्रतीत होता है। कौवे, तीतर और तितलियों के ये प्रतीक कहानी के बीच में जगह–जगह पर बिखरे पड़े हैं। कहीं पर ये बड़े अरुचिकर और अनावश्यक प्रतीत होते हैं पर कहीं कहानी में रुच जाते हैं। बौद्धिक साहित्य के वर्ग से आती हुई कई रचनाएं अपनी विशिष्ट शैली और विधा के कारण चर्चित रहती हैं, पसंद की जाती हैं, वे अपनी बौद्धिकता और चमत्कार में बड़ी सहज और ज़मीनी प्रतीत होती हैं, किंतु हाँ, इसके उलट 'रेत समाधि' में कई स्थानों पर बौद्धिकता और चमत्कार जबरदस्ती बोया गया लगता है और वो भी किसी विशेष बिंदु को रेखांकित करने की मांग पर नहीं। अन्यथा 'रेत समाधि' की पूरी कथा कुछ सर्गों या भागों में बड़े स्पष्ट रूप से बँटी दिखाई देती है। यह एक दुखद दुखांत कथा है जिसे गीतांजलि श्री ने बड़े खिलंदड़े अंदाज़ में आनन्दमय रोचक तरीके से इस तरह प्रस्तुत किया है कि जीवन, समाज, समय और सभ्यता के गहन गंभीर मुद्दे भी बिना किसी अवसाद के पाठक के भीतर उतरते जाते हैं, यह दूसरी बात है कि इसके लिए किताब एक से अधिक बार पढ़ना ज़रूरी है। कथा एक 80 बरस की वृद्ध माँ के रूपांतरण की कथा है, जो अपने पति की मृत्यु के बाद अवसाद में है। वही मुख्य किरदार है, जिसकी विरक्ति पुत्र के रिटायरमेंट के बाद के घटनाक्रम में दिखाई देती है और वहाँ से बढ़ती हुई कथा उसके खोने, मिलने और फिर बेटी के घर में रहने तक आती है। यहाँ वह अपने जीवन को अपने मन से जीती दिखाई पड़ती है। धीरे–धीरे खुलती हैं उसके भीतर की शांत पड़ चुकीं इच्छाएं, अपेक्षाएं, रुचियां, सपने और स्मृतियां। भूला बिसरा सब कुछ वह जीना शुरू कर देती है। यह दरवाज़े की ओर पीठ किए 'नईं नईंईंईंईं' कह अपने में छोटी होती जाती माँ नहीं है। यह अपने विस्तार में फैलती औरत है, जिसके भीतर स्मृतियों, कौशल और जीवन का संसार खुलता है। यहाँ प्रकट होती है रोज़ी, और रोज़ी के साथ ही उसके जीवन की एक दूसरी धारा, दूसरा रूप दिखाई पड़ता है, जो उसके बच्चों की समझ से भी बाहर है। रोज़ी का मरना और माँ बेटी का पाकिस्तान जाकर चिरौंजी देना इस आख्यान का अंतिम अध्याय है जहाँ जाकर यह बात खुलती है कि माँ और रोज़ी बँटवारे के समय एक साथ पाकिस्तान से दो बच्चियों की शक्ल में हिंदुस्तान ढकेल दी गईं। बेटी पर अब खुलता है कि रोज़ी से माँ का इतना प्रेम क्यों है। पाकिस्तान में अपने घर, मकान और लोगों से मिलते हुए माँ अपने पुराने प्रेमी या शौहर तक पहुँच जाती प्रतीत होती है, शुरू से दबी–ढकी कथा यहाँ आकर खुलती है कि यह विभाजन और किशोरवय में बिछुड़े अपनों की पीड़ा, और रेगिस्तान में भागती बचती दो बच्चियों के संघर्षों की सो गई स्मृतियों के दुःखों से बुने वो धागे हैं जो अब तक सुलझाए नहीं गए। कथा को इस विकास तक लाने के लिए तमाम घटनाएं, प्रसंग और प्रहसन रचे गए हैं। जीवन इतना छोटा और संक्षिप्त नहीं है कि इसी से शुरू और खत्म हो जाए, वह अपने विकास में विस्तृत हुआ और बच्ची चंदा 'चंद्रप्रभा देवी' होती है, एक भरे पूरे परिवार की मुखिया जो उम्र के इस पड़ाव पर आकर छोटी होती जाती है। यह छोटे होते जाना, सिमटते जाना दरअसल अंतर में स्मृतियों के विस्तार का संकेत है, जो सामान्य सामाजिक जीवन जीने वाली परंपराओं को समझ नहीं आता है। यही स्मृतियाँ वो तितलियाँ हैं जो, उसकी छड़ी के खोलने बंद होने पर उड़ती रुकती हैं। छड़ी ही शायद वह सहारा है, जो उसे हौसला देती है, वापस यात्रा करने की। इस आदि–अंत की पूरी गाथा के बीच में पारिवारिक सदस्यों, उनके जीवन और रोज़मर्रा की घटनाओं को तरतीबवार बँधी हैं। रिटायर बेटे की तरतीबवार, और अविवाहित बेटी की बेतरतीब बोहेमियन ज़िंदगी से उनकी नागवारी की कथा। इसके बीच में गुँथे दिलचस्प संवाद, माँ के आड़े तिरछे जवाब कथा को रोचकता से बुनते हैं। एक पूरा जीवन, जिसमें कई जीवन और

यादें गुंथी हैं, प्रसंग और प्रवाह के साथ उपन्यास का विकास करते हैं। किंतु पात्रों और घटनाओं की इस बुनन के मध्य अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक व राजनैतिक बिंदु भी हैं। मसलन, परिवारों में चलने वाली राजनीति, बहू का दीनता प्रदर्शन और बेटी की आलोचना। 'बड़े' की बहन से नाखुशी और अलगाव। मां को अपने ही पास रखने की अबोध दंभी ज़िद और बेटी के पास मां के रहने की अस्वीकार्यता, बेटी के अपनी चयनित स्वतंत्र जीवन–शैली पर मंथन करता मन, ये केवल पारिवारिक मतभेदों, असुरक्षाओं को ही नहीं दर्शाते, हमारी पूरी सामाजिक सरंचना, सोच और मनोविज्ञान को भी खोलकर सामने रख

देते हैं। वहीं दूसरी तरफ समाज, परिवार में स्त्री की भूमिका, उसके स्थान और छवि के बारे में बताते हैं। स्त्री केवल साधारण तौर पर मनुष्य नहीं है, विभिन्न भूमिकाओं और चरित्रों में उसकी पहचान अलग है और उसी के अनुसार उससे व्यवहार। यहां परिवार या रिश्तों की मर्यादा भी उसे नहीं बख़्शती। दूसरी तरफ माँ के किरदार को देखें, तो 'बड़े' के घर में दरवाज़े को पीठ दिखाए अपनी स्मृतियों के साथ जीती वृद्धा, बेटी के घर जाते ही एक मुक्ति का उत्सव बन जाती है। माँ के किरदार का यह रूपांतरण वह बोलता है जो कहानी में सीधे–सीधे नहीं कहा गया है, यदि पाठक सुनना चाहे तो। रोज़ी के किरदार की रचना और माँ से उसका बहनापा वास्तव में घरों में, परिवारों में, समाज में किन्नरों की एक भिन्न छवि और भूमिका को गढ़ता है, उनके स्वीकार्य को सहज करता है। कहीं एक संदेश भी है इसमें कि संघर्ष और दुःख का साथ लैंगिक भेदभाव से कमज़ोर नहीं पड़ता, बल्कि समय के साथ गहरा होता जाता है, भले ही बीच में कितनी ही लंबे फासले हों। रोज़ी की मृत्यु किन्नर समाज के अकेलेपन और चुनौतियों को दर्शाती है। ऐसे बहुत से छोटे बिंदु हैं, जो ऐसे बहुत से मुद्दों पर बात करते चलते हैं। कथा का चरम विकास माँ का बॉर्डर पार कर पाकिस्तान जाना, खैबर में कैद होना, और क़ैद में कुछ इस तरह निश्चिन्त होना, मानो उसका अपना ही घर हो। हाँ, अपना ही तो घर था, जहां से विभाजन के समय बेदखल हो देश के दूसरे हिस्से में आ गई थी, पीछे छूट गया था कितना कुछ। बेशक यह कथा काल्पनिक हो सकती है पर ये अब भी जीवित बहुत से वृद्धों की कथा हो सकती है। विभाजन के समय की दुश्वारियां, दुःख, संघर्ष और अपनी ही मिट्टी में विदा कहना, अस्सी बरस तक का जीवन जीने वाली किसी वृद्धा के भीतर की एक कितनी गहन कौंध हो सकती है, इसे समझना, बूझना और महसूस करने–कराने में समर्थ है कथा। हालांकि इस कथा के कहन को पहचानने की चेष्टा करती हूँ तो कहानी सुनने–सुनाने की कोई धुंधली सी याद ज़ेहन में रह–रहकर उभरती है, पढ़ने की नहीं । कई बार जो एक बात मन में कौंधती है कि तमाम अनावश्यक से लगते प्रसंग और प्रहसन, जो कथा के बीच में एक संदर्भ प्रसंग से परे चले जाते प्रतीत होते हैं, वे, और कथा की कहन, वे लोक की कहन से प्रेरित प्रतीत होते हैं। एक कहानी के भीतर गुंथी हुई है दूसरी कथा। गांव की चौपालों पर गढ़ी और कही जाने वाली कथाएं, जो किसी मस्त कथावाचक या किसी गांव के किसी यायावर गड़रिये, जिसके पास अनगिनत घरों और लोगों की कहानियों का जमावड़ा होता है, जिसके कहने का अंदाज़ बिल्कुल जुदा होता है, ऐसा कि हर कोई कहानी सुनने को बैठ जाए, जिनमें कहानी के सिरे तमाम अप्रासंगिक प्रसंगों और प्रहसनों के बावजूद अपने प्रवाह में बहते रहते हैं, रेत समाधि की कथा–कहन उन कथाओं को कहने वालों के अंदाज से भी प्रेरित प्रतीत होती है। कई बार ऐसा लगता है कि बचपन में किसी मेले में किसी कथा की कहन के आनंद का कोई सूत्र मन–मस्तिष्क में छूट गया, मन उसे बुनता गढ़ता रहा और किसी कल्पित और सत्य कथाओं के बीच के किसी कथानक को बुनने के समय में वही शैली और कहन रुचिकर कलात्मक तरीके से कलम में उतर आई। इस भाषा और कहन में पूरी कथा को अभिव्यक्त करने के लिए अपार धैर्य और मशक्कत की जो ज़रूरत थी, वह भी पाठक को महसूस होता है, जब वह इसे पढ़ता है जिसका बिंदु नाद कहीं भीतर सदियों तक शायद लेखिका के भीतर गुनगुनाता रहा होगा, और पढ़ने के बाद पाठक के भीतर भी गुनगुनाता रहेगा। यह सिर्फ मेरी कल्पना और अनुमान है, जो इस कथा को पढ़ते हुए मेरे भीतर पके हैं, और यह ही शायद इस पुस्तक की सफलता है कि पाठक के सोचने और समझने के लिए इसमें कई सूत्र हैं। इस कथा में कहन के भिन्न, अनूठे व ज़मीनी प्रयोग हैं। ये प्रयोग कहीं तो बड़े रोचक लगते हैं और कहीं कथा कहन में बाधक भी महसूस होते हैं, जब दोबारा पन्ना खोलने पर पुराने सूत्र को समझने के लिए पलट–पलटकर पीछे जाने की कवायद करनी पड़ती है। हालांकि ये प्रयोग इस पुस्तक को कहीं नवीन बनाता भी है और कहीं सामान्य पाठक के हाथ से सरका भी देता है। यह कहन और भाषा सहज और रौ में नहीं, सप्रयास लिखी गई प्रतीत होती है। कुल मिलाकर 'रेत समाधि' एक ऐसा उपन्यास है जिसे एक बार हर हाथ से गुज़रना तो चाहिए ही, कहन की कठिनता और उलझाव से भरा किंतु यह एक रुचिकर उपन्यास है। कथा का सिरा धीरे धीरे और एकदम अंत में खुलता है। जिज्ञासा अंत तक बनी रहती है कि क्या नायिका मां पाकिस्तान से सदेह सजीव वापस आ सकेगी या नहीं। पर जिस नाटकीय तरीके से उसका अंत दिखाया गया है वह भी चमत्कृत करता है। कथ्य में भी एक बात और चमत्कृत करती है, और गंभीर और तार्किक पाठक के मन में प्रश्न उठाती है, उठाएगी कि जो बेटी एक पत्रकार है और पुत्र इतना प्रभावी सरकारी अधिकारी रह चुका है वह किस तरह से मां के इस गैरज़िम्मेदाराना व्यवहार पर राज़ी हो जाता है और पीछे के दरवाज़े से इस विवादास्पद देश में जाने के लिए साथ चल पड़ता है, क्योंकि वास्तविकता में सरहदों की लाइन ऑफ कंट्रोल इस तरह पार तो नहीं की जाती, भले ही कथा तमाम सरहदों की सीमाओं से परे व्यापक होते–होते संपूर्ण संसार में फैल चुकी हो। फिर भी पैसेंजर ट्रेन की गति से पहली बार पढ़े जाने वाले इस उपन्यास में बाद में धीरे धीरे कोनों अतरों में झांकने, और उन प्रसंगों को चुभलाते रहने का आनंद देने की पर्याप्त क्षमता है। ■

मो. : 9453031216

ई–पेमेण्ट हेतु प्रपत्र

DDO Code

4731

Name (Account holder)

Account Number

Bank Name

ACCOUNT TYPE

☐ SBI Account

☐ Other Then SBI Account

(Tick Type of account "SBI Account" or "Other then SBI Account")

Branch Code / IFSC Code

(Branch Code if account type is SBI Account else IFSC Code)

Address 1	
Address 2	
Address 3	
Mob. No.	
Email ID	

उत्तर प्रदेश

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग उ0प्र0,
लखनऊ

ग्राहक/सदस्यता संबंधी प्रारूप

मैं 'उत्तर प्रदेश' (मासिक) पत्रिका की सदस्यता प्राप्त करना चाहता हूँ

वार्षिक	रु. 180/-	☐
द्विवार्षिक	रु. 360/-	☐
त्रैवार्षिक	रु. 540/-	☐

(कृपया सदस्यता अवधि चिन्हित करें)

डी.डी/म.आ.नं. : ________________ तिथि ________

उत्तर प्रदेश : अक्टूबर–दिसम्बर, 2022

नाम : ________________

ग्राहक का विवरण : छात्र ☐ विद्वत्जन ☐

संस्था ☐ अन्य ☐

पत्र व्यवहार का पता : ________________________

____

____

पिन कोड नं0: ☐☐☐☐☐☐

यदि आप पता बदलना चाहते हैं अथवा ग्राहक नवीनीकरण करना चाहते हैं तो कृपया अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करें ☐

नोट : कृपया डी.डी./एम.ओ. (धनादेश) निदेशक सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग (प्रकाशन प्रभाग), दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ–226 001 के नाम ही भेजने का कष्ट करें।

संजय कुमार सिंह की दो कविताएं

तुम मानो कि नहीं...

मैं इतने दिनों से बसर कर रहा हूँ किसी फूल में
कोई खुशबू तुम तक पहुँची कि नहीं?
हवाओं में बह रहा हूँ कब से
मेरे पैरों की आहट तुमने सुनी कि नहीं?
वह भोर के सूरज की सुनहली आभा
पंछियों का अमृत सा कलरव
रात को दरिया में लहरों की हलचल
नाव और चप्पू!
आदमपुर की गलियाँ
आसमान में उड़ते बादल, चाँद और सितारे
मैं कहाँ नहीं हूँ तुम्हारी यादों में भटकता हुआ
इस छोर से उस छोर तक
नींद खुले तो ओस की बून्दों को छूना
हर चीज में मिलूँगा मैं...
गीत में
गंध में
और हर स्पर्श में
मेरा होना बदल गया है एक उम्मीद में
तुम मानो कि नहीं सुमन्या!

नदी में शैवाल की तरह

यूँ तो नदी में बहुत से जलीय जीव
सखा सहचर अनंत जन्मों के
पर तुम्हारी जिन्दगी में
शैवाल की तरह हूँ मैं!
बहूँगा तुम्हारी स्मृति में
जैसे नदी के रन्ध्र में बहता है वह!
कुछ चीजों को कोई कैसे अलग कर देगा?
जैसे नदी से मछली को
फल से रस को
फूल से खुशबू को
याद से प्रेम को
और मुझसे तुमको?
कोई कर भी दे अपनी जिद्द से
तब क्या यह दुनिया रहेगी?
आकाश में चाँद,तारे और सूरज
देह में दूध और लहू
आँखों में स्वप्न
और उम्मीदों में भोर
हम और तुम संपूर्ण ब्रह्माण्ड में!
कोई कैसे अलग कर देगा?
तब यह दुनिया रहेगी?

◆

पता : पूर्णिया महिला कॉलेज,
पूर्णिया—854301
मो. : 9431867283

भारत सरकार के रजिस्ट्रार आफ न्यूज पेपर्स की रजिस्ट्री संख्या 33122/78
भारतीय डाक विभाग की डाक पंजीयन संख्या–एल.डब्लू./एन.पी. 432/2006

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश

प्रमुख प्रकाशन

उत्तर प्रदेश मासिक	:	समकालीन साहित्य, संस्कृति, कला और विचार की मासिक पत्रिका समूल्य उपलब्ध एक अंक रु. 15/– मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/– मात्र।
नया दौर (उर्दू)	:	सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विषय की एक उर्दू मासिक पत्रिका, एक अंक रु. 15/– मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/– मात्र।
वार्षिकी (हिन्दी/अंग्रेजी)	:	उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों के विस्तृत आंकड़ों एवं सूचनाओं का वार्षिक विवरण मूल्य रु. 325/– मात्र।

महत्वपूर्ण प्रकाशनों के लिए सम्पर्क करें

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र.
दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
उत्तर प्रदेश के समस्त जिला सूचना कार्यालय

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. स्वत्वाधिकारी के लिए शिशिर, निदेशक, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ द्वारा प्रकाशित तथा प्रकाश पैकेजर्स, लखनऊ में मुद्रित, सम्पादक– **कुमकुम शर्मा**